अप्रैल-जून, वर्ष-2 अंक-2

A Peer reviewed Journal

वितस्ता विमर्श

हिंदी भाषा,साहित्य, संस्कृति व समीक्षा को समर्पित

सम्पादक

डॉ. अमृता सिंह

वितस्ता विमर्श

हिंदी भाषा, साहित्य, संस्कृति व समीक्षा को समर्पित

संरक्षक
डॉ. सतीश विमल

सम्पादक
डॉ. अमृता सिंह

वितस्ता विमर्श एक अव्यवसायिक त्रैमासिक ई-पत्रिका है।
वर्ष में ४ अंक प्रकाशित होंगे
१-१५ अप्रैल तक जनवरी-मार्च अंक
१-१५ जुलाई तक अप्रैल-जून अंक
१-१५ अक्टूबर तक जुलाई-सितम्बर अंक
१-१५ जनवरी तक अक्टूबर-दिसम्बर अंक
प्रत्येक अंक के लिए रचनाएँ भेजने, दिशा-निर्देश तथा अन्य जानकारी www.vitasta-vimarsh.com पर

© *सर्वाधिकार सुरक्षित*

वितस्ता विमर्श अहिन्दी भाषा-भाषी क्षेत्र श्रीनगर, जम्मू व कश्मीर से प्रकाशित होने वाली प्रथम त्रैमासिक ई-पत्रिका है। अतः इस पत्रिका के साथ जुड़ें और हमें सहयोग दें। vitastavimarsh1@gmail.com पर अपनी रचनाएँ प्रेषित करें और अपने सुझावों से पत्रिका को समृद्ध करें।

वितस्ता विमर्श पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं व आलेखों की मौलिकता का दायित्व स्वयं रचनाकारों, लेखकों का है। रचनाओं व आलेखों में व्यक्त विचारों से संपादक व संपादक मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी प्रकार के विवाद में न्यायक्षेत्र केवल श्रीनगर, जम्मू व कश्मीर होगा।

सम्पादक

डॉ. अमृता सिंह

श्रीनगर, कश्मीर

email: amrita.ku26@gmail.com

Cell: 9622911777

सह सम्पादक

डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

श्रीनगर, कश्मीर

email: mudasirhindi@gmail.com

Cell: 9682593408

परामर्श मंडल

प्रो. ज़ोहरा अफ़ज़ल

प्रो. ज़ाहिदा जबीन

प्रो. कहकशां एहसान साद

श्री अनिल शर्मा जोशी

प्रो. संजय एल. मादार

प्रो. मुहम्मद मेराज अहमद

प्रो. विनोद कुमार तनेजा

प्रो. रुबी ज़ुत्शी

प्रो. मुहम्मद आशिक अली

प्रो. जय कौशल

प्रो. करण सिंह ऊटवाल

प्रो. महबूब सुबानी

सम्पादक मण्डल

डॉ. शगुफ्ता नियाज़

डॉ. नाइरा कुरैशी

डॉ. नरेश कुमार सिहाग

श्री विशाल कुमार

डॉ. सुशीला आर्या

डॉ. सब्ज़ार अहमद भट्ट

डॉ. रेखा सोनी

इस अंक में

सम्पादकीय-

वैचारिक खंड **08-11**

AI, ChatGPT और साहित्य: नयी यात्रा -भारती देवी

इतिहास/विरासत खंड **12-25**

वतन से दूरी ही मेरी साहित्य साधना की मूल प्रेरणा है! -डॉ. शिबन कृष्ण रैणा

विमर्श खंड **26-61**

सुमित्रानंदन पंत की बाल साहित्य सर्जना -गौरीशंकर वैश्य विनम्र

नयी शिक्षा नीति 2020 के आलोक में भारतीय ज्ञान प्रणाली -श्री आनंद दास

गुलजार के गीत और फिल्म *-डॉ.करन सिंह ऊटवाल*

भाषाई कौशल से परिलक्षित बहुभाषिक रामकाव्य
(रामकथा की विविधता के विशेष सन्दर्भ में) -दीपेन्द्र कुमार

काव्य खंड **62-65**

जंगलों में आदमखोर, नयी डालियाँ, सच्चा कवित्व -विनोद कुमार 'हंस'

चुप्पी की संस्कृति -धर्मेन्द्र कुमार

कथा खंड **66-71**

बहू रानी -डॉ. सतीश 'बब्बा'

सम्पादकीय

प्रिय पाठकगण, स्वागत है आपको इस अंक में। यह अंक न केवल इस पत्रिका के पन्नों का नया अध्याय खोल रहा है अपितु उस प्रतिबद्धता का पुनरवलोकन भी है जो हम सब ने मिलकर साहित्य के माध्यम से स्थापित किया है। साहित्य केवल शब्दों का संगम नहीं है- यह हमारी कल्पना, संवेदना, सामाजिक चेतना और हमारी भाषा-संस्कृति का दर्पण है। हम इस पत्रिका के द्वारा उस दर्पण को साफ रखना चाह रहे हैं ताकि उसमें आप-हम और हमारा समाज स्वयं को देख सके- उसके आभास से प्रेरणा पा सके।

इस अंक में आपन देखेंगे कि विविध विधाओं को समाहित करने का प्रयास किया है- कथा, कविता, एवं समसामयिक चिंतन क्योंकि हमें विश्वास है कि आज का हिन्दी साहित्य सिर्फ एक रूप में सीमित नहीं रह सकता। विभिन्न प्रवृत्तियाँ, विभिन्न आवाजें, विभिन्न अनुभव सबका समावेश ही इसे समृद्ध बनाता है। वस्तुतः जब हम लेख लिखते हैं, कवितायें पढ़ते हैं, विचारों पर विमर्श करते हैं- तब हम समाज की छोटी-बड़ी दरारों को देख पाते हैं, उसे शब्दों में पिरोते हैं और सीमित नहीं रहने देते। इसी दृष्टि से इस अंक की कुछ रचनाएँ सामाजिक सरोकारों, भाषा-संघर्ष, पहचान-खोज तथा व्यक्ति-भावना के क्षितिज को छू रही हैं।

इसके साथ ही, हमें यह भी याद रखना होगा कि वितस्ता विमर्श पत्रिका का कार्य केवल रचनाओं को प्रकाशित करना नहीं है अपितु हिंदी जगत् के साथ संवाद स्थापित करना भी है। आपके सुझाव, आपके विचार, आपके अनुभव सब हमारे लिए अमूल्य हैं। इसलिए हम इस अंक के साथ अनुरोध करते हैं किस प्रकार की रचनाएँ आप भविष्य में पढ़ना चाहेंगे, किन

विषयों पर विशेष अंक तैयार हों, क्या स्वर ज्यादा हों या विश्लेषण की गहराई बढ़ाई जाए- हमें अवश्य बताइए।

मैं आशा करती हूँ कि यह अंक आपके मन-मानस में कुछ नए विचार, कुछ नए अनुभव और कुछ नया उत्साह लेकर जाएगा।

सम्पादक
डॉ. अमृता सिंह
श्रीनगर, जम्मू व कश्मीर

AI, ChatGPT और साहित्य: नयी यात्रा

-भारती देवी

तकनीकी युग के इस नये दौर में साहित्य रचना और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI Artificial Intelligence) का संगम एक नयी यात्रा का आरंभ है, जिसमें AI, ChatGPT जैसे भाषा मॉडल ने लेखन, अध्ययन, आलोचना, विश्लेशन, समीक्षा और संवाद की प्रक्रियाओं को सरल, तीव्र, व्यापक, सुव्यवस्थित और सुविधाजनक बना दिया है। इसके कुछ लाभ हैं, परंतु इससे जुड़ी कुछ गहरी हानियाँ, चिंताएँ और सीमाएं भी हैं, जिन्हें समझना ज़रूरी है। यदि सहायक पक्ष की बात करें तो कहा जा सकता है कि ChatGPT ने लेखकों, छात्रों, शोधार्थियों और पाठकों के लिए भाषा, संदर्भ, जानकारी और प्रस्तुति को सहज और तीव्र बना दिया है, जिससे साहित्यिक कार्यों की गुणवत्ता को बढाना मिला है; अब किसी रचनाकार को संदर्भ सामग्री के लिए लंबे समय तक पुस्तकालयों की खाक नहीं छाननी पड़ती, वह घर बैठे ही हजारों स्रोतों से विचार ले सकता है और अपनी रचना को अधिक गहन, सटीक और सूचनापरक बना सकता है। इसी प्रकार, भाषा शैली में विविधता, व्याकरण की शुद्धता और जटिल विषयों को सरल रूप में प्रस्तुत करने की कला ने नये लेखकों के लिए यह तकनीक एक सशक्त सहायक के रूप में प्रस्तुत की है; इसके अतिरिक्त, अनुवाद, तकनीकी शब्दावली की सरल व्याख्या और साहित्य की विभिन्न विधाओं की पहचान में ChatGPT जैसे AI टूल्स ने साहित्य जनता के लिए सुलभ बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिससे साहित्य अब केवल विद्वानों, अनुभवी लेखकों का विषय न रहकर आम जनता की पकड मे आने लगा है। लेकिन जहां इसके फायदे हैं, वहीं कुछ गहरे और दूरगामी दुष्परिणाम भी इस तकनीकी हस्तक्षेप के कारण सामने आ रहे हैं; सबसे प्रमुख हानि यह है कि साहित्य की आत्मा- यानी संवेदना, अनुभव, यथार्थ, आशावादिता और जीवन-दृष्टि- जो एक

लेखक की निजी अनुभूति और संघर्ष से जन्म लेती है, वह AI के गणनात्मक और सांख्यिकीय (Code system) ढांचे में समाहित नहीं हो सकती, क्योंकि AI अनुभव नहीं करता, उसमे एहसास, भावनाएं दु: ख सुख हर्ष आदि मानवीय सरोकार नहीं हैं, वह केवल जानकारी को संयोजित करता है। ChatGPT की रचनाएँ, चाहे वह कहानी हो या कविता, एक सीमा तक भाषा में प्रभावशाली हो सकती हैं, परंतु उनमें वह भावात्मक ताप नहीं होता जो मनुष्य के अंतर्मन से उत्पन्न होता है। इसके चलते साहित्य के मानवीय पक्ष में कृत्रिमता का खतरा उत्पन्न हो गया है।

आर. के नारायण कृत उपन्यास The Vendor of Sweets में AI अथवा मशीन द्वारा साहित्य रचना का संदर्भ 1967 मे ही दे दिया गया था। जहाँ मशीन के अलग अलग बटन है एक बटन दबाने पर पात्रों का निर्माण होता दूसरा बटन दबाने पर कथ्य तैयार होता, कहानी के हर तत्व के लिए अलग अलग बटन है। प्रस्तुत उपनयास मे माली (पात्र) अपने पिता जगन को मशीन दिखाते हुए बताता है "*You see these four knobs… One is for characters, one for plot situations, the other one is for climax, and the fourth one is built on the basis that a story is made up of character, situations, emotion, and climax, and by the right combination….*" अर्थात् *आप इन चार घुंडियों को देखिये… एक पात्रों के लिए है, एक कथानक की स्थितियों के लिए है, दूसरी चरमोत्कर्ष के लिए है, और चौथी इस आधार पर बनाई गई है कि एक कहानी पात्रों, स्थितियों, भावनाओं और चरमोत्कर्ष से बनती है, और सही संयोजन से..* इसमें प्रश्न उठता है संवेदनहीन माली का कहानी मे मशीनी संवेदना को भरना कहां तक उचित है? रचना मे लेखक का अपना अनुभव, विचार, भाव, यथार्थ होता है किन्तु ऐसी स्थिति मे रचना का सृजक किसे माना जाए इसपर भी प्रश्न उठता है इसके अतिरिक्त, AI पर अत्यधिक निर्भरता लेखकों के मौलिक चिंतन, कल्पना और भाषिक अभ्यास को धीरे-धीरे कमजोर कर रही है, जिससे साहित्यिक सृजन में आत्मा की जगह केवल 'डाटा आधारित प्रस्तुति' का बोलबाला बढ़ता जा रहा है। अनेक युवा लेखक,

सुविधाओं के मोह में, ChatGPT से सीधी रचना करवा लेते हैं और लेखन का श्रेय स्वयं ले लेते हैं जिससे साहित्य में न केवल मौलिकता का हनन हो रहा है, बल्कि साहित्यिक ईमानदारी पर भी प्रश्न चिन्ह लग रहे है। यह हानियाँ केवल तकनीक की नहीं हैं, बल्कि मानवीय उपयोग की गलत नियत की भी हैं- जैसे कि बिना आलोचनात्मक दृष्टिकोण के तकनीक पर पूरी तरह निर्भर हो जाना, लेखकीय श्रम से बचना या साहित्य को केवल उत्पाद समझना। साथ ही, AI आधारित रचना में सांस्कृतिक गहराई, क्षेत्रीय अनुभव और सामाजिक संवेदनशीलता की कमी दिखाई देती है, जो यह दिखाती है कि AI, चाहे जितना भी विकसित क्यों न हो, वह मानवीय पीड़ा, संघर्ष और आत्मसंघर्ष को महसूस नहीं कर सकता।

इसके अलावा साहित्य केवल जानकारी का स्रोत नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना और विचार का उद्योजक है, रचना की आत्मा उसके सृजनकर्ता के दृष्टिकोण के साथ जुड़ी होती है, परंतु AI लेखन इस गहराई को नहीं छू पाता, जिससे साहित्य पाठक वर्ग को कम प्रभावित कर पाता है अतः यह आवश्यक हो जाता है कि हम AI और ChatGPT का उपयोग केवल एक सहायक के रूप में करें, न कि लेखक का स्थान दे दें। यह तकनीक लेखकीय प्रक्रिया को गति दे सकती है, विविधता ला सकती है और संदर्भों को समृद्ध कर सकती है हालंकि प्रस्तुत संदर्भ सटीक हो न हो यह विषय शंका के घेरे मे है, परंतु वह सच्चे साहित्य की आत्मा नहीं गढ़ सकती। यदि इस नवयात्रा को संतुलित रूप से अपनाया जाए, जहाँ मनुष्य अपनी कुशलता को बनाए रखे और तकनीक को केवल दिशा व संसाधन के रूप में प्रयोग करे, तभी साहित्य का यह युग सार्थक, मौलिक और जीवंत बनेगा। अन्यथा साहित्य एक भावहीन, यांत्रिक और दोहरावपूर्ण अनुकरण बनकर रह जाएगा, जिसमें संवेदनाओं की जगह केवल सूचना और अनुभवों की जगह केवल डेटाल (कोट की व्यवस्था) का बोलबाला होगा; इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि हम इस तकनीकी

यात्रा में विवेक और संतुलन के साथ आगे बढ़ें ताकि साहित्य की आत्मा जीवित रह सके और तकनीक उसके विकास का माध्यम बन सके, उसका विकल्प नहीं।

भारती देवी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर
6005547271
Bhartidevi9449@gmail.com

वतन से दूरी ही मेरी साहित्य साधना की मूल प्रेरणा है!

-डॉ. शिबन कृष्ण रैणा

(विश्व में अभी तक ऐसी कोई पाठशाला नहीं बनी जहां पर जीवननुभवों की सीख दी जा सके। ये नायाब अनुभव व्यक्ति को खुद के संघर्षों, उद्यमों और आत्म-निरीक्षणों से प्राप्त होते हैं। ये अनुभव रुपये-पैसे से भी ज्यादा मूल्यवान होते हैं। इन चोखे अनुभवों को सीखने की बहुत जरूरत हैं और यहीं हमारे जीवन के मार्ग को प्रशस्त कर सकते हैं।)

कश्मीर विश्वविद्यालय से 1960 में बीए अच्छे अंकों से पास कर लेने के बाद मेरे पास एम०ए० करने के दो विकल्प थे। या तो गणित में एमए करता या फिर हिंदी में। बीए में मेरे विषय थे गणित, हिंदी और राजनीति-शास्त्र। गणित और हिंदी में मेरा दाखिला हो गया था। चुनाव मुझे करना था कि हिंदी में दाखिला लूं या फिर गणित में। उस जमाने में कश्मीर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग के अध्यक्ष डॉ. हरिहरप्रसाद गुप्त (डॉ. माता प्रसाद जी के अनुज) हुआ करते थे। मेरे असमंजस अथवा दुविधा को डॉ साहब ने यह कह कर दूर किया कि हिंदी में दाखिला लेने पर वे मुझे छात्रवृत्ति दिलवाएंगे। उन्होंने यह कह कर भी मेरा उत्साह बढ़ाया कि कश्मीर जैसे दूरस्थ/ अहिंदी-प्रदेश से हिंदी-प्रेमी छात्र आगे चल कर निश्चित रूप से नाम कमाएंगे।

आज सोचता हूं कि डॉ. साहब कितने दूरदर्शी थे! अनेक वर्ष पूर्व इलाहाबाद से उनके लिखे एक पत्र की यह पंक्ति मेरे रोम-रोम को आज भी पुलकित करती है- 'प्रिय शिबन, शिष्य द्वारा गुरु को परास्त होते देख अपार हर्ष हो रहा है। ... सुखी रहो, मेरा आशीर्वाद सदैव तुम्हारे साथ है।' एक बार दिल्ली जाते समय अपनी सेहत/दीर्घ-आयु का खयाल न कर वे मुझ से, अपने शिष्य से, मिलने के लिए अलवर भी आए थे। डाक्टर साहब अब इस संसार में नहीं रहे मगर उनकी यादें अब भी मस्तिष्क में ताज़ा हैं।हमारे समय में यानी १९६०-६२ में कश्मीर विश्विद्यालय के स्नातकोत्तर हिंदी विभाग में अध्यक्ष डॉ. हरिहरप्रसाद गुप्त के अलावा डॉ. शशिभूषण सिंहल और डॉ० श्रीमती मोहिनी कौल हिंदी विभाग के प्राध्यापक हुआ करते थे। मुझे याद है रिजल्ट निकलने के बाद तथा एम०ए० प्रथम श्रेणी में प्रथम रहकर पास करने के उपरान्त

श्रीमती कौल जो कालान्तर में विभाग की प्रभारी बन गयी थीं, ने हिंदी विभाग में मेरी नियुक्ति करवाने में व्यक्तिगत रुचि ली।उस समय के कश्मीर विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रसिद्ध विद्वान और इतिहासवेत्ता KM Panikkar साहब से खुद मिलकर मेरी विभाग में नियुक्ति करवाई।हालांकि नियुक्ति तकनीकी कारणों से अस्थायी तौर पर हुयी थी। जाड़ों के अवकाश के शुरु होने तक मात्र तीन महीनों के लिए, मगर मुझे इस बात का गर्व है कि जिस विभाग का में विद्यार्थी रहा, उसी विभाग में मैं,थोड़े-से समय के लिए ही सही, प्राध्यापक भी रहा। बाद में नियति को कुछ और ही मंज़ूर था।मैं कुरुक्षेत्र विश्विद्यालय चला आया।दरअसल, इस बीच डॉ. शशिभूषण सिंहल कुरुक्षेत्र आ गये थे। उन्होंने मुझे वहां बुला लिया और उन्हीं के निर्देशन में मैं ने यूजीसी की फ़ेलोशिप पर शोधकार्य किया।१९६६ में राजस्थान लोकसेवा आयोग,अजमेर से मेरा हिंदी व्याख्याता के पद पर चयन हुआ और इस तरह वीर-वसुंधरा राजस्थान मेरी कर्मस्थली बन गई। पीछे मुड़कर देखता हूँ तो लगता है जैसे कि यह सब कल ही बातें हों।

आत्म-कथ्य लिखना किसी भी लेखक के लिए चुनौती का काम है। कारण, अपने बारे में लिखना आसान तो लगता है किंतु तभी सहसा दिमाग में एक बात और आती है कि 'लिखने' और 'बखान' में यानी आत्म-कथ्य और आत्म-प्रचार में स्पष्ट सीमा रेखा खिंच जानी चाहिए और उस रेखा को साफ-साफ उजागर करना ही एक सुलझे हुए लेखक की असली परख/ पहचान है। अपने आत्म-कथ्य में मैं इस बात के प्रति विशेषतया सावधान रहा हूं।

कश्मीर मेरी जन्मभूमि है। जन्म हुआ था श्रीनगर (कश्मीर) के पुरुषयार (हब्बाकदल) मुहल्ले में संवत 1999 में वैशाख शुक्ल पक्ष की सप्तमी को। ईस्वी सन् के हिसाब से यह तिथि 22 अप्रैल 1942 बैठती है। निम्न मध्यवर्गीय परिवार के तमाम अभावों और दबावों को विरासत में पाकर बचपन और किशोरावस्था के उद्दाम और बेफिक्री के दिनों को मैंने मन मारकर बिताया है।

पिताजी की प्राइवेट नौकरी हमारे 7 सदस्यीय परिवार के लिए तन ढंकने और दो टाइम का साग-भात जुटाने के लिए काफी न थी। माताजी कहती थी कि दुर्दिनों के हमने कई-कई बार चावल का मांड पिया है और सत्तू खाया है। 'जबरी स्कूल' में ढाई आने फीस जमा कराने के लिए भी हमें कई बार उधार लेना पड़ता था।

बड़ी मौसी की हैसियत हमसे कुछ ज्यादा ठीक थी, शायद सीमित परिवार के कारण। समय-असमय उसने हमारी बहुत मदद की है। कई बार माताजी ने मुझे उनके पास आलीकदल भेजा है और मैं 3 मील पैदल चलकर उनके यहां से कभी चावल, कभी आटा और कभी 5-7 रुपए चुपचाप लाया हूं।

नौकरी के सिलसिले में पिताजी लंबे समय तक जम्मू में रहे। रेडक्रॉस के दफ्तर में उनकी नौकरी थी। सर्दियों में हम जम्मू चले जाते और गर्मियों में वापस श्रीनगर लौट आते। इस आवाजाही के कारण मेरी स्कूली शिक्षा दो जगह हुई। जम्मू में घास मंडी स्कूल में तथा श्रीनगर में जबरी स्कूल (टंकीपोरा) तथा श्रीप्रताप हाईस्कूल में। सरकारी स्कूलों में जैसी पढ़ाई और जैसा माहौल होता है, उसी को आत्मसात करता मैं 10वीं प्राप्त कर गया। यह बात 1956 की है। 10वीं में मुझे अच्छे अंक मिले थे- प्रथम श्रेणी में 7 या 8 ही घटते थे। कॉलेज में प्रवेश लेने के लिए विषयों का सही चयन करना अनिवार्य था।

मुझे याद है कि प्रवेश फॉर्म भरते समय कॉलेज के एक अनुभवी प्रोफेसर साहब ने मेरे प्राप्तांक को ध्यान में रखते हुए मुझे विज्ञान संकाय में जाने की सलाह दी थी, क्योंकि आने वाले समय में रोजगार की दृष्टि से कला की तुलना में विज्ञान की संभावनाएं अच्छी थीं। 10वीं में यह विषय मेरे पास न होने पर भी वे मुझे विज्ञान दिलवाने के पक्ष में थे। घर पर दो दिनों तक इस बात पर खूब विचार होता रहा कि मैं विज्ञान लूं या आर्ट्स?

चूंकि पिताजी ज्यादातर जम्मू में रहते थे अत: हमारे घर के सारे मुख्य निर्णय दादाजी लेते थे। दादाजी की अपनी विवशताएं, अपने पूर्वाग्रह तथा स्थितियों को समझने की अपनी दृष्टि थी। वे हिन्दी-संस्कृत के अध्यापक तथा एक धर्मपरायण/ कर्मकांडी ब्राह्मण थे। (कश्मीर ब्राह्मण मंडल के वे वर्षों तक प्रधान रहे।) विज्ञान जैसे पदार्थवादी विषय से उनका दूर का भी वास्ता न था। उन्होंने जोर/ तर्क देकर मुझे कला संकाय में जाने को कहा, क्योंकि उस स्थिति में हिन्दी-संस्कृत के विषयों को वे मुझे अच्छी तरह से पढ़ा सकते थे।

आज सोचता हूं कि यदि विज्ञान संकाय में प्रवेश ले लिया होता तो एक दूसरे ही रसहीन संसार में विचरण कर रहा होता मैं, और साहित्य व कला के अनूठे, कालजयी, यशबहुल तथा रससिक्त संसार से एकात्म होकर आत्मविस्तार की

अनमोल सुखानुभूति से वंचित रह जाता। इसे मैं दादाजी का पुण्य प्रताप ही मानूंगा कि उन्होंने मुझ में हिन्दी के प्रति प्रेम को बढ़ाया और यह उनकी ही दूरदृष्टि का परिणाम है कि मैं एम. ए. तक पढ़ पाया अन्यथा मैट्रिक कर लेने के बाद पिताजी मुझे नौकरी पर लगवाने के पक्ष में थे।

कश्मीर विश्वविद्यालय में एम.ए. हिन्दी खुले संभवत: 2 ही वर्ष हो गए थे, जब मैंने 1960 में एमए में प्रवेश लिया। उस समय विभाग में 30 लड़के-लड़कियां तथा 3 प्रोफेसर थे। डॉ. हरिहरप्रसाद गुप्त विभाग के अध्यक्ष तथा डॉ. शशिभूषण सिंहल व डॉ. मोहिनी कौल प्राध्यापक हुआ करते थे। मैंने पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दोनों में अधिकतम अंक प्राप्त कर 1962 में एमए हिन्दी प्रथम श्रेणी में प्रथम रहकर किया।
मुझे याद है हिन्दी विभाग में साहित्य परिषद या हिन्दी सेमिनार जैसे एक मंच का निर्माण किया गया था जिसमें हर शनिवार को 'गोष्ठी' होती थी। इस गोष्ठी में छात्र-छात्राओं की स्वरचित कविताओं, गजलों, कहानियों, शोधपरक निबंधों का वाचन होता। समीक्षाएं भी होतीं और जमकर होतीं। 1 वर्ष तक मैं इस हिन्दी सेमिनार का छात्र सचिव रहा और संभवत: गोष्ठियों का संचालन करते-करते, गुरुजनों की समीक्षाएं सुनते-सुनते तथा छात्र लेखकों की रचनाएं सुनते-सुनते मेरे भीतर का छिपा लेखक इतना प्रभावित और विलोड़ित हुआ कि मैंने नियमित रूप से लिखने का अभ्यास करना प्रारंभ कर दिया।

मैंने बहुत कुछ लिखा, पर वह छपा नहीं। कश्मीर जैसे अहिन्दी प्रांत में हिन्दी रचना का छपना-छपाना सरल कार्य न था। पूरे प्रांत से 'योजना' नाम की एकमात्र सरकारी पत्रिका निकलती थी और उस पर वरिष्ठ लेखकों का दबाव अधिक था। हम नए लेखकों को भला कौन जानता? मुझे याद है मेरी पहली रचना 'समाज और हम' (जिसे मैंने हिन्दी सेमिनार में पढ़ा था) 1960 में युवक (आगरा) में छपी थी मेरे फोटो के साथ। रचना छपवाने के लिए मेरे श्रद्धेय गुरुजी डॉ. शशिभूषण सिंहल ने मेरी मदद की थी। गुरुजी के सिफारिशी पत्र के साथ मैंने उक्त रचना संपादक को भेजी थी।

यकीन मानिए, जब डाक से पत्रिका मेरे पास आई और मैंने अपनी रचना सचित्र उसमें देखी तो मैं इतना प्रसन्न हुआ, इतना प्रसन्न हुआ मानो कुले-जहां की खुदाई मिल गई हो। पूरे 7 दिनों तक मेरी प्रसन्नता का ज्वर नहीं टूटा। इन 7 दिनों के दौरान पत्रिका मेरे बगल में ही रही। उठते-बैठते, घूमते-फिरते, खाते-पीते हर बार

पलट-पलटकर अपनी रचना को देख लेता, मित्रों को दिखाता और मन ही मन सुखामृत के घूंट पीता रहता।

रचना छप तो गई। वाहवाही भी मिली किंतु गुरुदेव डॉ. हरिहर प्रसाद गुप्त की मंशा कुछ और ही थी। मुझमें वे संभवत: उन तमाम संभावनाओं का पता लगा चुके थे, जो आगे चलकर मुझे साहित्य के क्षेत्र में प्रतिष्ठापित करतीं। उनका आग्रह था कि मैं शुद्ध साहित्यिक विषयों, जैसे सूर, तुलसी, नई कविता, छायावाद, रस निष्पत्ति, साहित्य और समाज आदि विषयों का अध्ययन तो कर लूं, मगर इन पर लिखने की जिद न पकडूं। इन विषयों के अधिकारी लेखक हिन्दी जगत में बहुत हैं और इन विषयों के माध्यम से आगे बढ़ने की संभावना भी उतनी नहीं है जितनी कश्मीर संबंधी विविध विषयों को आधार बनाने से है। इसमें उन्हें कश्मीर की सांस्कृतिक-साहित्यिक धरोहर को हिन्दी जगत तक पहुंचाने की आवश्यकता नजर आ रही थी और साथ ही संपर्क भाषा हिन्दी के माध्यम से देश की दो संस्कृतियों को मिलाने की वे बात सोच रहे थे।

मेरे लिए उन्होंने साहित्य साधना का नूतन मार्ग खोल दिया। मेहनत करके मैंने 'कश्मीर की झीलें' शीर्षक से एक सचित्र लेख 'सरिता' में प्रकाशनार्थ भेजा। 2-3 महीनों के बाद रचना छप गई नयनाभिराम गेटअप के साथ। 60 रुपए पारिश्रमिक भी मिला। गुरुजी ने ठीक ही कहा था कि कश्मीर संबंधी विषयों पर लिखने की बहुत जरूरत और गुंजाइश थी। 'कश्मीर के प्रसिद्ध खंडहर', 'कश्मीरी संगीत', 'कश्मीरी कहावतें और पहेलियां' आदि मैंने लेख लिखे। ये बातें 1960-61 की हैं।

कश्मीर की सुरम्य घाटी को मैंने नवंबर 1963 में छोड़ा। नहीं जानता था कि मातृभूमि को सदा-सदा के लिए छोड़ना पड़ेगा। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से फैलोशिप मिली और पीएचडी करने मैं कुरुक्षेत्र आया। इस बीच हमारे प्रोफेसर डॉ. शशिभूषण सिंहल कश्मीर से कुरुक्षेत्र विश्वविधालय में चले आए थे। वे मेरे शोध कार्य के निदेशक नियुक्त हुए। शोध का विषय था- 'कश्मीरी तथा हिन्दी कहावतों का तुलनात्मक अध्ययन।' अपने पीछे मां-बाप की छत्रछाया, भाई-बहनों का प्यार तथा बंधु-बांधवों का सान्निध्य छोड़ अपनी राह स्वयं बनाने तथा अपनी मंजिल स्वयं तय करने के एकाकी अभियान पर चल पड़ा था मैं। घर और अपने परिवेश की सीमित-सी दुनिया को अलविदा कहकर मैंने एक नए परिवेश में प्रवेश किया था।

मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैं घर से चला था तो मात्र 50 रुपए लेकर चला था। दादाजी ने चुपचाप अलग से 10 का नोट मेरी जेब में डाल बालों पर हाथ फेरते हुए कहा था- 'हमसे दूर जा रहे हो। एक बात का हमेशा ध्यान रखना बेटा, परदेश में हम लोग तुम्हारे साथ तो होंगे नहीं, पर तुम्हारी मेहनत, लगन और मिलनसारिता हरदम तुम्हारा साथ देगी। औरों के सुख में सुखी और उनके दु:ख में दु:खी होना सीखना। सच्चा मानव धर्म यही है।'

यहां पर इस बात का उल्लेख करना अनुचित न होगा कि एक समय में कश्मीर में हिन्दी के प्रचार तथा हिन्दी लेखन के प्रति लोगों में बड़ा उत्साह और आदरभाव था। क्रालखोड (हब्बाकदल) में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का कार्यालय हुआ करता था और प्राय: हर इतवार की शाम को वहां हिन्दी से प्रेम रखने वाले उत्साही युवकों एवं वरिष्ठ लेखकों का मजमा जुड़ जाता था। बहसें होतीं, कवि सम्मलेन आयोजित होते, साहित्यिक चर्चाएं होतीं, पुस्तकों के विमोचन होते, कहानियां पढ़ी जातीं आदि-आदि।

यह बात इस शती के 5वें/ 6ठे दशक की है। मैं कोई 15 वर्ष का रहा होऊंगा। इन गोष्ठियों में सम्मिलित तो हो जाता किंतु पीछे वाली पंक्ति में बैठ (या बिठा दिया) जाता। उस वक्त के कुछ बड़े नामों में प्रो. काशीनाथ धर, प्रो. लक्ष्मीनारायण सपरू, श्रीकंठ तोषखानी, प्रो. पृथ्वीनाथ पुष्प, मोतीलाल चातक, द्वारिकानाथ गिगू, रतनलाल शांत, प्रेमनाथ प्रेमी, शशिशेखर तोषखानी, प्रो. लीलकंठ गुर्टू, हरिकृष्ण कौल, प्रो. चमनलाल सपरू, जानकीनाथ कौल 'कमल' आदि याद आ रहे हैं।

कालांतर में समय ने करवट ली और इसी के साथ कश्मीर में हिन्दी के ये प्रहरी और प्रेमी भी इधर-उधर बिखर गए। हां, माननीय प्रो. चमनलाल सपरू साहब आज भी हिन्दी के लिए कृतसंकल्प हैं और मेरे कार्य की प्रशंसा करते नहीं अघाते। मेरी पहली पुस्तक 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' (सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली 1972) की विस्तृत भूमिका उन्हीं ने लिखी है।

कुरुक्षेत्र विश्वविधालय में 2 वर्ष की अवधि बिताने के साथ ही नौकरी के लिए तलाश शुरू होने लगी और मैंने इधर-उधर प्रार्थना पत्र भेजे। 2 जगह मेरा चयन हुआ। दिल्ली के एक सांध्यकालीन कॉलेज में अस्थायी तौर तथा राजस्थान

लोकसेवा आयोग, अजमेर द्वारा राजस्थान कॉलेज शिक्षा सेवा के लिए पक्के तौर पर। निर्णय मुझे लेना था।

राजस्थान सरकार की नौकरी ही मेरी नियति बनी, क्योंकि अस्थायी नौकरी स्वीकार करने का जोखिम उठाना मेरे बूते से बाहर था। जुलाई 1966 से मैं राजस्थान के विभिन्न सरकारी कॉलेजों में अध्यापनरत हो गया। राजकीय कॉलेज, भीलवाड़ा में मेरी प्रथम नियुक्ति हुई। 1 वर्ष तक वहां पर रह लेने के बाद लगभग 10 वर्षों तक राजकीय कॉलेज, नाथद्वारा (उदयपुर) में रहा। 1978 से राजकीय स्नातकोत्तर कला महाविद्यालय, अलवर में स्थानांतरित होकर आया।

इस बीच 1975-76 में वर्ष के लिए भारत सरकार के पटियाला स्थित उत्तर क्षेत्रीय भाषा केंद्र में कश्मीरी भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन, उसके व्याकरण और उसकी पाठ्य साम्रगी का निकट से अनुशीलन करने का मुझे सुअवसर मिला। संत कवयित्री ललद्द्द पर मैंने यहीं पर एक पुस्तक तैयार की, जो भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक की सुंदर प्रस्तावना प्रसिद्ध हिन्दी विद्वान और पत्रकार बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखी है।

प्रभु श्रीनाथजी की प्रसिद्ध नगरी नाथद्वारा में बिताए गए 10 वर्ष मेरे जीवन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण और दिशासूचक वर्ष रहे हैं। यही वे वर्ष हैं जिन्होंने मेरे भीतर के लेखक (साहित्यसेवी) को एक सुनिश्चित आकार देना प्रारंभ किया और मेरे साहित्यिक भविष्य की एक पक्की नींव डल गई।

ये तमाम वर्ष मेरे लिए कठोर परिश्रम के वर्ष थे। अपनी जम्भूमि से सैकड़ों मील दूर, डल झील और चिनारों की शीतल और पुलकनभरी दुनिया से विलग, नर्म-नर्म बर्फ की छुअन से सदा के लिए विमुख होकर मैं वीर वसुंधरा राजस्थान की प्रचंड गर्मी और लू से टक्कर लेता हुआ परदेस में लसने-बसने, अपने लिए एक जगह बनाने तथा अपने भविष्य को संवारने की चिंता में साधनारत था।

अपनों से दूरी ने मन में जो रिक्तता और टीस पैदा की थी, वह मेरे लिए वरदान सिद्ध हुई। मैंने निश्चय किया कि मेरा प्रवास आजीविका जुटाने का प्रयास मात्र नहीं होना चाहिए किंतु मुझे कुछ ऐसा करना चाहिए जिससे मेरे भीतर की वियोगजन्य पीड़ा की क्षतिपूर्ति हो। सच पूछा जाए तो मातृभूमि (वतन) से दूरी और तज्जन्य रिक्तता का भाव ही मेरी समस्त साहित्य साधना की मूल प्रेरणा हैं।

कुछ-कुछ यही बात 1983 में पटना के सचिवालय सभागार में बिहार राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित मेरे अभिनंदन समारोह में उस समय के बिहार के मुख्य सचिव ने कही थी। अपने समापन भाषण में सचिवजी ने शायद ठीक ही कहा था कि रैणाजी अगर कश्मीर में होते तो इतना महत्वपूर्ण और उपयोगी कार्य न करते। दरअसल, अपने वतन से दूरी ने ही उन्हें इतना ठोस कार्य करने की प्रेरणा दी है।

इस बीच राजस्थान जैसे विशुद्ध हिन्दी प्रांत में कार्य करने से मेरे हिन्दी के व्यावहारिक ज्ञान की सीमाएं विस्तृत हो चुकी थीं। मैंने हिन्दी के रोजमर्रा के मुहावरे को आत्मसात कर लिया था, भाषा पर मेरी पकड़ मजबूत होती जा रही थी। हिन्दी भाषा और साहित्य के जानकारों/ विद्वानों से दिनोदिन मेरा संपर्क बढ़ता जा रहा था। सभा-गोष्ठियों में मेरी भागीदारी बढ़ती जा रही थी। कश्मीर छोड़कर राजस्थान को अपना कार्यक्षेत्र बनाने का एक जबरदस्त फायदा मुझे यह हुआ कि भाषा और अभिव्यक्ति शैली में बहुत परिष्कार हुआ। मेरी पहली पुस्तकाकार रचना 'कश्मीरी भाषा और साहित्य' 1972 में छपी। इसे मैंने लगभग 2 वर्षों की मेहनत के बाद नाथद्वारा में तैयार किया था।

सुप्रसिद्ध हिन्दी-संस्कृत विद्वान एवं सांसद ('राजतरंगिनी' के विख्यात भाष्यकार) डॉ. रघुनाथ सिंह ने लगभग 18 वर्ष पूर्व राजस्थान में रहकर कश्मीरी साहित्य-संस्कृति पर मेरे निष्ठापूर्ण लेखन को देखकर सुखद आश्चर्य प्रकट किया था। (डॉ. सिंह पं. नेहरू के समय कश्मीर मामलों की संसदीय समिति के सदस्य रहे हैं) अपने 18 नवंबर 1974 के हाथ से लिखे पत्र में उन्होंने मुझे लिखा था- 'आप साहित्य की जो सेवा कर रहे हैं उससे कश्मीर और भारत उऋण नहीं हो सकते। विचित्र विपर्यय है- कहां कश्मीर का तुषार मंडित देश और कहां राजस्थान की मरुभूमि किंतु दोनों हैं उज्ज्वल वर्ण। राजस्थान की ऊष्मा ने वीरों को उत्पन्न किया है और हिमालय भूमि में आसीन कश्मीर ने दार्शनिकों एवं महाकाव्यकारों को।'

नाथद्वारा प्रवास के दौरान ही मैंने कश्मीरी भाषा की लोकप्रिय रामायण 'रामावतारचरित' का सानुवाद लिप्यांतरण किया। इस कार्य को पूरा करने में मुझे लगभग 5 वर्ष लगे। भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ से प्रकाशित इस सेतु ग्रंथ की सुंदर प्रस्तावना डॉ. कर्णसिंहजी ने लिखी है। मेरे प्रयास की भूरि-भूरि प्रसंशा करते हुए उन्होंने लिखा- 'डॉ. शिबन कृष्ण रैणा ने अपने कठोर परिश्रम से मूल कश्मीरी भाषा

की इस अमोल निधि 'रामावतारचरित' का देवनागरी लिपि में लिप्यांतरण किया है और हिन्दी में इसका सुंदर अनुवाद भी, जो अपने आप में प्रशंसनीय कार्य है। यों भी तो डॉ. रैणा हिन्दी के माध्यम से कश्मीरी भाषा और साहित्य की सेवा में संलग्न हैं किंतु मुझे आशा है कि वे समय-समय पर कश्मीरी के अनेक अनमोल रत्नों की छटा को प्रतिबिम्बित करने का अपना प्रयास जारी रखेंगे। मैं उनकी सफलता एवं स्वास्थ्य की कामना करता हूं।'

मेरा जन्म चूंकि एक परंपरावादी हिन्दू ब्राह्मण परिवार में हुआ इसलिए ईश्वर के अस्तित्व में मेरा अविश्वास कभी नहीं रहा। पर मेरे मन ने यह कभी स्वीकार नहीं किया कि ईश्वर, श्रम से बढ़कर है। श्रम के प्रति मेरे अटूट विश्वास ने ही मुझे 'भाग्यवादी' नहीं बनाया है। हां, जब मैं देखता हूं कि इस संसार में ऐसे भी अनेक लोग हैं, जो श्रम के प्रति उदासीन होते हुए भी सफलताएं अर्जित कर रहे हैं तो मन को बड़ी तकलीफ होती है। तब श्रम पर से मेरी आस्था हिल जाती है और मैं न चाहते हुए भी प्रारब्ध, भाग्य, नियति, कर्मों का फल, पूर्व जन्म के संस्कार आदि जैसी बातों पर विश्वास करने लग जाता हूं। इसे आप मेरे मन की कमजोरी कह सकते हैं, मगर सच्चाई यही है।

'कश्मीरी भाषा और साहित्य' पुस्तक लिखते समय, कश्मीरी रामायण 'रामावतारचरित' का सानुवाद लिप्यांतरण करते समय, कश्मीरी की श्रेष्ठ कहानियों का अनुवाद करते समय, केंद्रीय साहित्य अकादमी के अंग्रेजी प्रकाशनों 'ललद्द' और 'हब्बाखातून' का हिन्दी में अनुवाद करते समय, महजूर की कविताओं को हिन्दी में रूपांतरित करते समय या फिर भारतीय ज्ञानपीठ के लिए कश्मीरी का प्रतिनिधि संकलन तैयार करते समय मैंने सच में अपनी आंखों का रक्त पृष्ठों पर उतारा है। मन-मस्तिष्क के एक-एक तंतु को कठोर परिश्रम की यातना से गुजारा है, तब जाकर कहीं सृजन की पीड़ा झेलकर ये पुस्तकें सामने आ सकी हैं।

'ललद्द' के अंग्रेजी से हिन्दी में किए गए अनुवाद को मैं अपनी मेहनत का अनूठा प्रसाद मानता हूं। जिसने भी उसे पढ़ा, विभोर हो गया। एक समीक्षक ने तो यहां तक लिख दिया- 'अनुवाद गजब का है। भाषा-शैली पुष्ट एन प्रांजल। हिन्दी के पाठकों के लिए इस दुर्लभ सामग्री को सुलभ कराकर रैणाजी ने बड़ा पुनीत एवं सार्थक कार्य किया है। यह पुस्तक इतिहासविदों, साधकों एवं साहित्यकारों के लिए समान रूप से उपयोगी है।' (प्रकर, दिसंबर, 1981)

ऐसा ही कुछ परम आदरणीय विष्णु प्रभाकरजी ने मेरी अनुवादित/ संपादित पुस्तक 'कश्मीर की श्रेष्ठ कहानियां' (राजपाल एंड संस, दिल्ली) के बारे में लिखा- 'कश्मीर की श्रेष्ठ कहानियां' की अधिकांश रचनाएं पढ़ गया। कश्मीरी जीवन को नाना रूपों में रूपायित करती ये कहानियां बहुत सुंदर हैं। सबसे अच्छी बात तो यह है कि ये अनुवाद लगतीं ही नहीं। मूल भावना भी उतनी ही सुरक्षित रह सकी है। मेरी हार्दिक बधाई लें।'

मेरी रचना यात्रा के साक्षियों में मेरे गुरुजन, सुरुचि संपन्न मित्र तथा वे सब हितैषी शामिल हैं जिन्होंने सच्चे मन से मेरी साहित्यिक उपलब्धियों पर प्रसन्नता व्यक्त की है। गुरुदेव डॉ. हरिहरप्रसाद गुप्त ने अपने एक पत्र में मुझे इलाहाबाद से लिखा था- 'तुम्हारी उपलब्धियों पर मुझे गर्व है। शिष्य द्वारा गुरु को परास्त होते देख अपूर्व आनंद की प्राप्ति हो रही है। आगे बढ़ो और यशस्वी बनो।'

मेरी जीवनसंगिनी हंसा का भी इस यात्रा में कम योगदान नहीं रहा है। हमारी शादी 14 जून 1967 को कश्मीर में हुई थी। एक कुलीन ब्राह्मण परिवार में जन्मी मेरी धर्मपत्नी के दादाजी हरभट्ट शास्त्री अपने समय के जाने-माने कर्मकांडी, शैवाचार्य तथा संस्कृत के पंडित थे। अपने दादाजी से प्राप्त संस्कारों को अपने व्यक्तित्व में साकार करते हुए मेरी श्रीमती ने मेरे लेखन को मन ही मन आदर की दृष्टि से देखा है। स्वयं साहित्य की प्राध्यापिका होने की वजह से इस सारे कार्य की गुणवत्ता और महत्ता का उसे पूरा अंदाज है। कई-कई बार प्रेस में जाने से पहले मेरी रचनाएं उसने पढ़ी हैं और बहुमूल्य सुझाव भी दिए हैं। हां, मेरी पुस्तकों/ फाइलों/ कागजों की अस्त-व्यस्तता से वह तंग अवश्य हुई है और यही साहित्य के मामले में हमारे बीच छोटी-मोटी टकराहट का मुख्य मुद्दा रहा है। वह पुस्तकों को करीने से सजाने के पक्ष में रही है और मैं उन्हें 'घोटने' के पक्ष में। अधखुली किताबें, बेतरतीबी से बिखरे कागज, टेबल के दाएं-बाएं किताबों के छोटे-मोटे ढेर और उनके बीच में मैं। सच, मुझे यह सब बहुत अच्छा लगता है। कोई कागज या पत्र कहीं इधर-उधर चला जाए, फाइल कहीं दब जाए, किताब रैक में मिले नहीं- मुझे जाने क्यों उसे ढूंढ निकलने में बड़ा आनंद आता है।

मेरा साहित्यिक अवदान मुख्य रूप से एक अनुवादक के रूप में अधिक है इसीलिए कई विज्ञ साथियों ने मेरी साहित्य सेवा को 'सेतुकरण' की संज्ञा दी है। 1990

में उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान ने लखनऊ में मुझे 'सौहार्द सम्मान' से अलंकृत करते हुए प्रशस्ति पत्र में कुछ ऐसा ही कहा था- 'डॉ. शिबनकृष्ण रैणा कश्मीर और हिन्दी भाषियों के बीच एक लब्ध प्रतिष्ठित साहित्य प्रेमी, अनुवादक और लेखक के रूप में जाने जाते हैं। हिन्दी भाषियों को कश्मीरी साहित्य की ऊंचाइयों से परिचित करने के लिए आपने असाधारण मेहनत की और उसकी अनेक रचनाएं आज उन्हीं की सक्रियता से हिन्दी में उपलब्ध हैं। उनकी उल्लेखनीय, विशिष्ट और दीर्घकालीन हिन्दी सेवा और कश्मीरी जैसी आत्मीय भारतीय भाषा को राष्ट्रभाषियों के बीच पहुंचाने में अतुलनीय योगदान के लिए उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान उन्हें सौहार्द सम्मान से सम्मानित करते हुए 10,000 रुपए की धनराशि भेंट करता है।'

यही बात 1983 में ताम्रपत्र प्रदान करते हुए बिहार सरकार के राजभाषा विभाग ने मेरे साहित्यिक अवदान के बारे में कही थी। 2014 में भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय ने मुझे सीनियर फैलोशिप (हिन्दी) प्रदान की और 2015 में भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय ने मुझे अपनी 'हिन्दी सलाहकार समिति' का गैरसरकारी सदस्य मनोनीत किया। केंद्रीय हिन्दी निदेशालय की कई समितियों आदि में भी मुझे काम करने का सुअवसर मिला है।

मैंने अनुवाद को हमेशा मूल के बराबर का ही प्रयास माना है। यह मौलिक सृजन से भी बढ़कर कष्टसाध्य कार्य है। अपनी पुस्तक 'कश्मीर की प्रतिनिधि कहानियां' (देवदार प्रकाशन, दिल्ली) में 'पूर्व निवेदन' के अंतर्गत मैंने इसी बात को रेखांकित करते हुए लिखा है- 'अनुवाद, मौलिक सृजन से भी बढ़कर एक दुष्कर कार्य है। यह काम इतना जटिल, श्रमसाध्य और विरस है कि इससे होने वाली कोफ्त (यातना) का अंदाज वही लगा सकते हैं जिन्होंने अनुवाद का कार्य किया हो। अनुवाद तो एक तरह से योगी का परकाया प्रवेश है। वह पुनर्जन्म है, रचना का पुनर्सृजन! वह द्वितीय श्रेणी का लेखन नहीं, मूल के बराबर का ही प्रयास है।

सुंदर, प्रभावशाली तथा पठनीय अनुवाद के लिए यह आवश्यक है कि अनुवाद भाषा प्रवाह को कायम रखने के लिए, स्थानीय बिम्बों तथा अन्य रूठ प्रयोगों को बोधगम्य बनाने और वर्ण्य विषय को अधिक हृदयग्राही बनाने के लिए मूल रचना में आए में नाम को समान फेरबदल कर वह ऐसा लंबे-लंबे वाक्यों को तोड़कर, उनमें संगति बिठाने के लिए अपनी ओर से दो-एक शब्द जोड़कर तथा अर्थ

के बदले आशय पर ध्यान देकर, कर सकता है। इस संकलन की कहानियों का अनुवाद करते समय मैंने यही किया है। ऐसा न करता तो अनुवाद 'अनुवाद' न होकर 'सरलार्थ' बन जाता। मैंने प्रयत्न किया है कि प्रत्येक अनुवादित रचना अपने आप में एक 'रचना' का दर्जा प्राप्त करे।

पूर्व में कहा जा चुका है कि अनुवाद पिछले लगभग 30-35 वर्षों से मेरी रुचि का विषय रहा है। अध्यापन कार्य के साथ-साथ कश्मीरी, अंग्रेजी, उर्दू आदि भाषाओं से मैंने अनुवाद का काम खूब किया है। चूंकि मेरा कार्य अपनी तरह का पहला कार्य था इसलिए साहित्य, विशेषकर अनुवाद के क्षेत्र में मुझे प्रतिष्ठा भी यथोचित प्राप्त हुई।

अनुवाद कार्य के दौरान मुझे लगा कि अनुवाद विधा मौलिक लेखन से भी ज्यादा दुष्कर एवं श्रमसाध्य विधा है। (मैंने कुछ मौलिक कहानियां, नाटक आदि भी लिखे हैं) अनुवाद संबंधी अपनी दीर्घकालीन सृजन यात्रा के दौरान मेरा वास्ता कई तरह की कठिनाइयों/ समस्याओं से पड़ा जिनसे प्राय: हर अच्छे अनुवादक को जूझना पड़ता है। अनुवाद कार्य के दौरान मुझे लगा कि अपने अनुभवों को साक्षी बनाकर मुझे ऐसी कोई परियोजना हाथ में ले लेनी चाहिए जिसमें अनुवाद के सैद्धांतिक पक्षों की सम्यक् विवेचना हो तथा अनुवाद कार्य में आने वाली कठिनाइयों/ समस्याओं का विवेचन कर उनके निदान आदि पर भी सार्थक विचार हो।

1997 के प्रारंभ में मैंने गंभीरतापूर्वक इस परियोजना के प्रारूप पर विचार करना शुरू किया तथा इसी वर्ष के अंत में विधिवत इस परियोजना को आवश्यक पत्र/ प्रपत्रों के साथ 'भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान' शिमला को विचारार्थ भिजवा दिया। सभी भारतीय भाषाओं का ज्ञान चूंकि मुझे नहीं था इसलिए मैंने विषय सीमित कर परियोजना का शीर्षक रखा- 'भारतीय भाषाओं से हिन्दी में अनुवाद की समस्याएं : एक तुलनात्मक अध्ययन, कश्मीरी-हिन्दी के विशेष संदर्भ में'। 1 मई 1999 को मैंने संस्थान में प्रवेश किया। एक नए, सुखद एवं पूर्णतया शांत/ अकादमिक वातावरण में कार्य करने का यह मेरा पहला अवसर था जिसकी अनुभूति अपने आप में अद्भुत थी। लगभग ढाई वर्षों की अवधि में मैंने यह कार्य पूरा किया जिसका मुझे परम संतोष है। मेरा यह शोध कार्य संस्थान से प्रकाशित हो चुका है।

मित्रों का कई बार आग्रह रहा कि मुझे अनुवाद के अलावा कुछ मौलिक भी लिखना चाहिए। यह बात शायद वे इसलिए कह रहे थे कि मेरी कार्यित्री प्रतिभा में कितनी ऊर्जा और दम है, वे यह देखना चाहते थे। यों कश्मीरी भाषा, साहित्य, कला, संस्कृति आदि पर मैंने बीसियों शोधपरक/ समीक्षात्मक लेख लिखे होंगे, जो समय-समय पर देश की विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं यथा- 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'सन्मार्ग' (कलकत्ता), 'जनसत्ता', 'परिषद पत्रिका', (पटना), 'शीराजा', 'आजकल' आदि में छपे हैं, पर शायद यह मौलिक लेखन न था। मित्र चाहते थे कि मैं भी कहानियां/ कविताएं/ नाटक लिखूं और मात्र 'अनुवादक' बनकर न रह जाऊं।

मैंने चुनौती स्वीकार कर ली। भीतर मन में छटपटाहट तो थी ही, रचना की भाषा से भी मैंने साक्षात्कार कर लिया था और फिर साहित्य शास्त्र का अध्येता/ प्राध्यापक होने के कारण रचना की सृजन प्रक्रिया के मूल एवं आवश्यक तत्वों की जानकारी भी मुझे थी। मैंने कहानी लिखने का प्रयास किया। 'शतरंज का खेल', 'मोहपाश', 'अंतराल', 'रिश्ते' आदि मेरी ऐसी स्वरचित कहानियां हैं जिन्होंने मुझे और मेरे मित्रों को आश्वस्त कर दिया कि मौलिक सृजन करने की मेरी संभावनाएं कम नहीं हैं। ये सभी कहानियां आकाशवाणी के जयपुर केंद्र से प्रसारित हो चुकी हैं तथा कुछेक तो 'जनसत्ता', 'राजस्थान पत्रिका', 'शीराजा' आदि में छपी हैं। पाठकों ने इन कहानियों को खूब सराहा।

आकाशवाणी जयपुर केंद्र के लिए लिखे मेरे नाटक 'हब्बाखातून', 'प्रेम और प्रतिशोध', 'खानखानां रहीम' आदि भी कम लोकप्रिय सिद्ध न हुए। 'हब्बाखातून' लिखने और उसके प्रसारित होने के बाद मुझे खुद लगा कि मैं अच्छे संवाद लिख सकता हूं। जिन्होंने भी इस नाटक को सुना, मुझे बधाई दी। मेरी स्वरचित कहानियों का एक संग्रह 'मौन संभाषण तथा अन्य कहानियां' राजस्थान साहित्य अकादमी के आर्थिक सहयोग से प्रकाशित हो चुका है। 'दिनन के फेर' से एक नाटक संकलन भी प्रकाशित हुआ है।

साहित्य सेवाओं के लिए मुझे केंद्रीय हिन्दी निदेशालय (भारत सरकार), राजभाषा विभाग (पटना), उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, सिन्ध राष्ट्रभाषा प्रचार समिति (जयपुर), भारतीय साहित्य संगम (दिल्ली), राष्ट्रभाषा प्रचार समिति श्रीडूंगरगढ़ (बीकानेर), भारतीय अनुवाद परिषद दिल्ली आदि संस्थाओं ने ताम्रपत्रों, प्रशस्तिपत्रों

तथा अभिनंदन पत्रों आदि से समय-समय पर सम्मानित किया है। दो-एक संस्थाओं ने 'साहित्यश्री' तथा 'साहित्य-वागीश' जैसी मानद उपाधियां भी प्रदान की हैं।

सम्मान प्राप्ति के इन हर्षदायक अवसरों के पीछे मेरे मन में अपूर्व आनंद का भाव अवश्य व्याप्त रहा है। दरअसल, सम्मान/ पुरस्कार जड़ता (शैथिल्य) को मिटाता है, मन में नव्य कर्मोत्साह का उदय/ संचार करता है। यों सम्मान या पुरस्कार लेखक के लिए साध्य नहीं होते और होने भी नहीं चाहिए। उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान के 'सौहार्द सम्मान' की सूचना मेरी श्रीमतीजी ने मुझे अलसुबह स्थानीय दैनिक पढ़कर दी थी, तब मैं शायद सो ही रहा था।

कई साहित्यिक गोष्ठियों एवं सम्मेलनों में भाग लेने के लिए मैंने पिछले 4 दशकों में देश के दूरस्थ अंचलों/ स्थानों यथा इम्फाल, वास्को-डि-गामा, जगन्नाथपुरी, एर्नाकुलम, मद्रास, पयनूर, कटक, बेंगलुरु, गुवाहाटी, शिलांग, पटना, लखनऊ, उदयपुर, कन्याकुमारी, जलपाईगुड़ी, शांति निकेतन, अमृतसर, हरिद्वार आदि जाने कितनी ही जगहों की यात्राएं की हैं। इन यात्राओं से मेरा दृष्टिकोण व्यापक और चिंतन पुष्ट हुआ है। इसी के साथ अपने देश की वैविध्यपूर्ण संस्कृति और देशवासियों के स्वभाव को भी निकट से देखने का अवसर मिला है।

स्व०. डॉ. प्रभाकर माचवेजी ने बहुत पहले मुझे एक पत्र लिखा था- 'आप सशक्त लेखनी और उद्यमशील शोध-बुद्धि के मेधावी स्कॉलर हैं। आप अवश्य कश्मीरी के लिए हिन्दी में बहुत अच्छा काम करेंगे।'

माचवेजी की ये पंक्तियां मुझे याद दिलाती हैं कि मुझे कश्मीरी के लिए बहुत अच्छा काम करने के अपने प्रयास में कमजोरी नहीं लानी है। आयु बढ़ने के साथ-साथ घर-परिवार तथा अंदर-बाहर की जिम्मेदारियां भी बढ़ती जाती हैं और लेखन के लिए समय निकाल पाना मुश्किल हो जाता है। फिर भी अपने जीवट पर मुझे विश्वास है।

डॉ. शिबन कृष्ण रैणा
२/५३७ अरावली विहार.
अलवर (राजस्थान)
सम्प्रति बैंगलोर में
skraina123@gmail.com

सुमित्रानंदन पंत की बाल साहित्य सर्जना

गौरीशंकर वैश्य विनम्र

सुमित्रानंदन पंत प्रकृति के सुकुमार कवि हैं। छायावादी काव्य की सम्पूर्ण कोमलता और कमनीयता उनके काव्य में साकार हो उठी है। प्रकृति के हरे-भरे वातावरण में बैठकर जब वे कल्पना में खो जाते थे, तो प्रकृति की सुन्दरता का सृजन स्वयं ही मूर्त हो उठता और मानवता के मंगलमय उन्नयन के स्वर गूंज उठते। पंत जी ने स्वयं स्वीकार किया है कि "कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली,जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कूर्मांचल प्रदेश को है।"

कवि सुमित्रानंदन पंत का जन्म हिमाचल की गोद में बसे उत्तरांचल नमस्ते उत्तराखण्ड) के अल्मोड़ा जिलांतर्गत कौसानी ग्राम में 20 मई सन् 1900 में हुआ था। जन्म के कुछ घंटों के बाद ही इनकी माँ का निधन हो गया, जिससे इनका लालन-पालन इनकी दादी ने किया। इनके पिता गंगादत्त पंत ने बालक का नाम गुसांई दत्त रखा था। इन्होंने गाँव की पाठशाला और राजकीय हाईस्कूल अल्मोड़ा से शिक्षा प्राप्त करने के बाद काशी से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की। अल्मोड़ा में पढ़ते समय ही इन्होनें अपना नाम गुसांई दत्त से बदलकर सुमित्रानंदन पंत रख लिया। इसके बाद जब वे प्रयाग के सेन्ट्रल म्योर कालेज से इण्टर कर रहे थे, तभी सन् 1919 में गाँधी जी के असहयोग आंदोलन से प्रभावित होकर पढ़ाई छोड़ दी और स्वाध्याय से ही अँग्रेजी, संस्कृत और बांग्ला का अध्ययन किया। पंत जी ने चौथी कक्षा से ही छंद - रचना प्रारम्भ कर दी थी।

उन्होंने सन् 1938 में इलाहाबाद से निकलने वाली पत्रिका 'रूपाभ'का कुशल संपादन किया। सन् 1950 से 1957 तक वे आकाशवाणी में उच्च पद पर आसीन रहे। अविवाहित रहकर पंत जी ने अपना सम्पूर्ण जीवन माँ - भारती के चरणों में समर्पित कर दिया। पंत जी को 'कला और बूढ़ा चाँद 'पर साहित्य अकादमी,'लोकायतन' पर सोवियत लैण्ड पुरस्कार और 'चिदम्बरा' पर ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुए। भारत सरकार ने हिन्दी साहित्य की अनवरत साधना के लिए उन्हें

सन् 1961 में 'पद्म भूषण 'से अलंकृत किया। 29 दिसम्बर, 1977 को इनका निधन हो गया।

रचनाएँ - इनकी प्रमुख रचनाएँ काव्य - कृतियाँ, नाटक, कहानी एवं उपन्यास है, विवरण इस प्रकार है :

काव्य कृतियाँ - वीणा, ग्रंथि, पल्लव, गुंजन, युगांत, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्णकिरण, स्वर्णधूलि, युगपथ. उत्तरा,वाणी,पतझर, गीत हंस, लोकायतन, पुरुषोत्तम राम, गीत पर्व आदि।

उपन्यास - हार

कहानी संग्रह - पाँच कहानियाँ

इसके अतिरिक्त उमर खय्याम की रुबाइयों का हिन्दी अनुवाद 'मधु ज्वाल 'में किया है और अनेक संग्रहों की भूमिकाएँ भी लिखीं हैं।

प्रकृति - पुत्र पंत जी का बाल साहित्य में अवदान

सुमित्रानंदन पंत प्रकृति,प्रेम और कल्पना के सुकुमार कवि हैं। वे प्रकृति के चतुर चितेरे हैं।

अपने बाल्यकाल से ही प्रकृति के सुरम्य प्राँगण में क्रीड़ा करने के कारण प्रकृति और पंत दोनों एक हो गए हैं। इनकी गद्य और पद्य, दोनों प्रकार की रचनाओं में प्रकृति - प्रेम का प्रभाव स्पष्टतया परिलक्षित होता है। बालसाहित्य का नाम देकर उन्होंने कोई कृति तो नहीं रची, किन्तु मनीषी साहित्यकार सुमिता पंत के द्वारा जो बालकहानी संकलन''आलू और बैंगन सुंदरी 'के नाम से आया है,उसमें कुल 16 बाल कहानियाँ सम्मिलित हैं। इसमें सुमित्रानंदन पंत की 11 और सुमिता पंत की 5 बाल कहानियाँ संग्रहीत हैं।

उक्त संकलन के विषय में सुमिता पंत की स्वीकारोक्ति है - "पंत जी खड़ी बोली के कवि थे,लेकिन कवि के साथ-साथ वे बहुत अच्छे कहानीकार भी थे। उन्होंने बहुत अधिक कहानियाँ तो नहीं लिखीं, लेकिन जो भी लिखीं, वे सब बच्चे के लिए ही है।"

'आलू और बैंगन सुंदरी 'बालकहानी संग्रह में इसी शीर्षक की एक बालकहानी के साथ - साथ 'हंस और राजकुमारी', 'पीलू हाथी', 'पृथ्वी का क्रोध 'इत्यादि 11 बाल कहानियाँ श्री सुमित्रानंदन पंत जी द्वारा सृजित की गई हैं। इन

कहानियों में अनावश्यक विस्तार या उपदेश नहीं है, अपितु मस्तिष्क को कल्पना की नई उड़ान देकर भावनाओं से जुड़ाव का माध्यम बनती हैं। इन बाल कहानियों में पशु-पक्षी, भौंरे, तितलियाँ, पेड़, फूल,आसमान आदि प्रकृति की वस्तुओं को ही पात्र बनाया गया है तथा बाल सुलभ रोचक शब्द - शैली और स्वाभाविक सवादों के माध्यम से कथानक बुने गए हैं। इन सभी बालकहानियों के माध्यम से उन्होंने बालकों को स्वस्थ मनोरंजन, जीवनोपयोगी शिक्षा तथा सुसंस्कृत संदेश प्रदान किए हैं।

पंत जी प्रकृति चित्रण करने वाले सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनकी कविताएँ बालमन की कोमल और कोरी कल्पना की बालसुलभ रंगीन उड़ानों और गहन अनुभूतियों से परिपूर्ण हैं।

उन्होंने न केवल प्रकृति के सौन्दर्य का चित्रण किया, अपितु रोचक बाल रचनाओं से बच्चों को प्रकृति से जुड़कर मानवता का पाठ सीखने के लिए प्रेरित किया।

'बादल 'नामक कविता में कवि की कल्पना ने बादलों को अनेक रूपों में देखा है-

फिर परियों के बच्चों से हम
पकड़ इन्दु के कर सुकुमार।
समुद पैरते शुचि ज्योत्स्ना में
सुभग सीप के पंख पसार।

चाँदनी में तैरते हुए बादल ऐसे लगते हैं, मानों परियों के बच्चे सीप के पंख लगाकर चाँदनी के समुद्र में चन्द्रमा के किरण रूपी हाथ को पकड़ कर तैरना सीख रहे हों। कवि ने संध्या के समय चिड़ियों के एक साथ चहचहाने का कितने सुन्दर शब्दों में सजीव चित्रण किया है, देखें-

बाँसों का झुरमुट
संध्या का झुटपुट
हैं चहक रहीं चिड़ियाँ
टी वी टी टुट-टुट।

कविवर पंत जी ने 'गाता खग 'नामक कविता में प्रकृति द्वारा जग-जीवन को नया संदेश दिया है।उन्हें प्रातःकालीन पक्षी जीवन का स्वागत करते प्रतीत होते हैं, तो

संध्याकालीन पक्षी जीवन का मंगलगान करते जान पड़ते हैं। इसमें बालकों को पक्षी से अच्छी सीख लेने के लिए प्रेरित किया गया है-

गाता खग प्रातः उठकर-
सुन्दर सुखमय जग-जीवन।
गाता खग संध्या-तट पर-
मंगल, मधुमय जग-जीवन।

प्रकृति के आँगन में हँसते हुए फूल अपने हृदय की सुगंध से संसार के आँगन को महकाने की सलाह देते हैं- 'गाता खग' का निम्नलिखित काव्यांश सूक्ति जैसा मनोरम और अर्थगर्भित है-

हँसमुख प्रसून सिखलाते,
पलभर है, जो हँस पाओ।
अपने घर की सौरभ से,
जग का आँगन भर जाओ।

समुद्र की लहरें बार - बार उठती हैं, फिर गिर जाती हैं। यह प्रक्रिया लक्ष्य पाने के लिए सतत संघर्ष करने हेतु प्रेरित करती है-

उठ-उठ लहरें कहतीं यह-
हम कूल विलोक न पाएँ,
पर इस उमंग में बह-बह
नित आगे बढ़ते जाएँ।

पंत जी ने 'बापू के प्रति 'रचित कविता में युगपुरुष महात्मा गाँधी के महान व्यक्तित्व का निरूपण करते हुए कहा है-

तुम माँसहीन, तुम रक्तहीन
हे अस्थिशेष! तुम अस्थिहीन,
तुम पूर्ण इकाई जीवन की,
जिसमें असार भव-शून्य लीन।

चींटी को देखकर उनकी बालमन की सूक्ष्म दृष्टि की मनोभावना अद्भुत है-

चींटी को देखा?
वह सरल विरल काली रेखा।

तम के तागे-सी जो हिल-डुल
चलती लघु पद पल-पल मिल-जुल।

खेतों में लहलहाती फसलें, उनसे उठती भीनी सुगन्ध, फूली सरसों की पीताभा धरती को वासंती सौन्दर्य से भर देती है। 'ग्रामश्री ' का यह मनोरम दृश्य देखते ही बनता है-

रोमांचित-सी लगती वसुधा
आई जौ-गेहूँ में बाली।
अरहर, सनई की सोने की/ किंकणियाँ हैं शोभाशाली।
उड़ती भीनी तैलाक्त गंध/ फूली सरसों पीली-पीली।
लो! हरित धरा से झाँक रही
नीलम की कलि, तीसी-नीली।

वर्ष 1897 में स्वामी विवेकानंद के अल्मोड़ा आगमन की पृष्ठभूमि में पंत जी ने 'बाल प्रश्न'नामक कविता रची थी। पंत जी जन्म से ही अल्मोड़ा से जुड़े हुए थे। उनकी यह कविता सहज बाल-जिज्ञासा प्रकट करती है और उसी उदात्त भाव से माँ प्रश्नों का उत्तर भी प्रस्तुत करती है-

माँ अल्मोड़े में आए थे,जब राजर्षि विवेकानंद,
तब मग में मखमल बिछवाया, दीपावलि की विपुल अमंद।
बिना पाँवड़े पथ में क्या वे, जननि नहीं चल सकते हैं?
दीपावलि क्यों की? क्या वे माँ! मंद दृष्टि कुछ रखते हैं?
कृष्णे! स्वामी जी तो दुर्गम. मग में चलते हैं निर्भय।
दिव्य दृष्टि है, कितने ही पथ, पार कर चुके कंटकमय।
वह मखमल तो भक्ति भाव थे, फैले जनता के मन के,
स्वामी जी जो प्रभावान हैं, वे प्रदीप थे पूजन के।

'प्रथम रश्मि 'पंत जी की पहली कविता है, जो उन्होंने सन् 1919 में सृजित की थी और यह 'वीणा 'पत्रिका में सन् 1927 में प्रकाशित हुई थी। इस कविता में कवि ने सुबह की पहली किरण को नए जीवन, नई आशा और नई शुरुआत का प्रतीक माना है-

प्रथम रश्मि का आना रंगिणि!
तूने कैसे पहचाना?

कहाँ-कहाँ हे बाल विहंगिन
पाया तूने वह गाना?
सोयी थी तू स्वप्न नीड़ में
पंखों के सुख में छिपकर।
ऊँघ रहे थे घूम द्वार पर
प्रहरी-से जुगनू नाना।

कविवर पंत जी प्रातःकालीन वेला में जागरण का संदेश देते हैं। इस स्वर्णिम प्रात में निद्रा-तंद्रा त्याग कर, कुछ नया करने के लिए प्रेरित करते हैं। कविता की कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं-

जागो रे जागो, कामचोर!
डूबे प्रकाश में दिशा छोर
अब हुआ भोर, अब हुआ भोर।
आई सोने की नई प्रात
कुछ नया काम हो, नई बात
तुम रहो स्वच्छ मन, स्वच्छ गात
निद्रा छोड़ो, रे गई रात।

कल्पना ही पंत जी की कविता की मेरुदण्ड है। बालमन की कोमल कल्पना ने ही उनकी कविता को मनोहर और आकर्षक बना दिया है। 'यह धरती कितना देती है' उनकी बालकविता बाल मनोभावों को जीवंत करती है।

इसमें बालक ने अपनी बाल्यावस्था में पृथ्वी में कुछ पैसे इस आशा से बोये थे कि उनमें से रुपयों के फल लगेंगे, जैसे अन्न की खेती होती है, किन्तु पैसों के पेड़ नहीं उगे और उसकी आशा पूर्ण नहीं हो सकी। इसमें सार्थक श्रम एवं प्रयास करने का संदेश दिया गया है-

मैंने छुटपन में छिपकर पैसे बोये थे
सोचा था, पैसों के प्यारे पेड़ उगेंगे।
रुपयों की कलदार मधुर फसलें खनकेंगी
और फूल फलकर मैं मोटा सेठ बनूँगा,
पर बंजर धरती में एक न अंकुर फूटा।

बन्ध्या मिट्टी ने, न एक भी पैसा उगला
रुपये जाने कहाँ मिटे, कब धूल हो गए।
मैं हताश हो बाट जोहता रहा दिनों तक,
बाल कल्पना के अपलक पाँवड़े बिछाकर
मैं अबोध था, मैंने गलत बीज बोये थे,
ममता को रोपा था, तृष्णा को सींचा था।

कविता की निम्नलिखित पंक्तियों में कवि पंत जी ने, सेम के बीज बोये और जब वे उग आये, वे इसका बालसुलभ चित्रण करते हैं-

देखा आँगन के कोने में कई नवागत
छोटे-छोटे छाता ताने खड़े हुए हैं!
छाता कहूँ कि विजय पताकाएँ जीवन की
या हथेलियाँ खोले थे वे नन्हीं प्यारी
जो भी हो, वे हरे-भरे उल्लास से भरे
पंख मारकर उड़ने को उत्सुक लगते थे
डिम्ब तोड़कर निकले चिड़ियों के बच्चे-से!

छोटे बच्चे सदैव अपनी माँ के पास रहना चाहते हैं और उनसे प्यार-दुलार पाना चाहते हैं। बड़ा होने पर उन्हें माँ जैसा प्यार नहीं मिलता, इसलिए माँ का प्यार पाने के लिए बच्चे सदैव छोटा ही रहना चाहते हैं। बच्चे की इसी इच्छा और स्वभाव का वर्णन करती है पंत जी की यह कविता-

मैं सबसे छोटी होऊँ!
तेरी गोदी में सोऊँ।
तेरा अंचल पकड़-पकड़कर
फिरूँ सदा माँ! तेरे साथ।
कभी न छोड़ूँ तेरा हाथ।
बड़ा बनाकर पहले हमको
तू पीछे छलती है मात।
हाथ पकड़ फिर सदा हमारे
साथ नहीं फिरती दिनरात।

अपने कर से खिला. धुला मुख
धूल पोछ, सज्जित कर गात।
थमा खिलौने,नहीं सुनाती
हमें सुखद परियों की बात!
ऐसी बड़ी न होऊँ मैं!
तेरा स्नेह न खोऊँ मैं।
तेरे अंचल की छाया में
छिपी रहूँ निस्पृह, निर्भय।
कहूँ - दिखा दे चन्द्रोदय।

वर्षा ऋतु में मेघ गर्जन करते हुए बरसते हैं, दादुर, झिल्ली, मोर और चातक आनंदित होकर किस प्रकार मधुर ध्वनियाँ करने लगते हैं, उन्होंने इसका सजीव वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में किया है-

झमझम-झमझम मेघ बरसते हैं सावन के ।
छम-छम-छम गिरती बूँदें तरुओं से छन के।
दादुर टर-टर करते, झिल्ली बजती झन-झन।
'म्याव-म्याव' रे! मोर, 'पीउ-पीउ' चातक के
उड़ते सोन बलाक आर्द्र-सुख से कर क्रंदन।
घुमड़-घुमड़ फिर मेघ गगन में भरते गर्जन।

प्रकृति के कवि के रूप में पंत जी का हिन्दी साहित्य में सर्वोपरि स्थान है। आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी ने लिखा है- "कल्पना ही पंत की कविता का मेरुदण्ड, उनकी काव्यसृष्टि का मापदण्ड है। कोरी कल्पना की बालसुलभ रंगीन उड़ानों से लेकर अत्यंत तल्लीन और गहन कल्पना अनुभूतियों के चित्रण में पंत जी का विकासक्रम देखा जा सकता है। "प्रकृति के चतुर चितेरे और बालमन की कोमल भावनाओं के अप्रतिम कवि के रूप में पंत जी सदैव अमर रहेंगे।

-गौरीशंकर वैश्य विनम्र
117 आदिलनगर,विकासनगर
लखनऊ 226022
दूरभाष 09956087585

नयी शिक्षा नीति 2020 के आलोक में भारतीय ज्ञान प्रणाली

-श्री आनंद दास

शोध सारांश : नई शिक्षा नीति 2020 भारतीय ज्ञान परंपरा और दर्शन की समृद्ध विरासत को अपना आधार मानती है। इसी वजह से नई शिक्षा नीति 2020 शिक्षा के सभी स्तर के पाठ्यक्रम में भारतीय ज्ञान प्रणाली को शामिल करने की (.एस.के.आई) सिफारिश करती है। भारतीय ज्ञान प्रणाली पारंपरिक भारतीय ज्ञान प्रणालियो ं और समकालीन ज्ञान प्रणालियों के बीच की खाई को पाटने का प्रयास करती है। भारत की नई शिक्षा नीति में परिवर्तनकारी बदलाव लाने के लिए नई शिक्षा नीति)NEP) 2020 में भारतीय ज्ञान प्रणालियों को व्यापकता और एकीकरण प्रदान करती है। पारंपरिक भारतीय ज्ञान प्रणालियां भारतीय शिक्षा प्रणाली को कैसे पुनर्जीवित और उपयोगी बना सकती इस शोध पत्र के जरिए पता लगाया जा सकता है। इस लेख में नई शिक्षा नीति 2020 में भारतीय ज्ञान प्रणाली की प्रासंगिकता को विश्लेषित करने की कोशिश की गई है। इसमें प्राचीन ज्ञान प्रणालियों को वर्तमान भारतीय शिक्षा प्रणाली में शामिल करने के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित करने का भी प्रयास रहेगा। इसमें वर्तमान भारतीय शिक्षा के विकास के परिप्रेक्ष्य में नई शिक्षा नीति 2020 की उल्लेखनीय भूमिका को दर्शाया है। भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित समकालीन ज्ञान को समझने का प्रयास किया गया है ताकि वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों का समाधान किया जा सके। यदि नई शिक्षा नीति 2020 का क्रियान्वयन सफल व सुनियोजित रुप से होता है तो यह नई शिक्षा नीति निश्चित रूप से भारत को वैश्विक पटल में एक नया आयाम प्रदान करेगी।

बीज शब्द : भारतीय ज्ञान प्रणाली, नई शिक्षा नीति 2020, भारतीय ज्ञान परंपरा, समकालीन ज्ञान।

प्रस्तावना : भारतीय ज्ञान प्रणाली प्राचीन काल से चली आ रही एक समृद्ध बौद्धिक धरोहर है। यह प्रणाली दर्शन, विज्ञान, व्याकरण, गणित, खगोलशास्त्र, योग, आयुर्वेद,

संगीत, कला और साहित्य जैसे क्षेत्रों को समाहित किए हुए हैं। प्राचीन ज्ञान प्रणाली ज्ञान, विज्ञान, प्रकृति प्रेम और मानवता को प्रोत्साहित करने वाली थी जो मनुष्य को रचनात्मक बनाता है। प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली के विकास और विस्तार में तक्षशिला विश्वविद्यालय, नालंदा विश्वविद्यालय, वल्लभी विश्वविद्यालय,विक्रमशिला विश्वविद्यालय, ओदंतपुरी विश्वविद्यालय, सोमपुरा महाविहार, जगद्दला महाविहार, नागार्जुन विश्वविद्यालय, पुष्पगिरी विश्वविद्यालय, मिथिला विश्वविद्यालय आदि का विशेष योगदान रहा है। यह विश्वविद्यालय शिक्षा और ज्ञान का एक प्रमुख केंद्र था, जहां दुनिया भर से विद्वानों, चिकित्सकों और दार्शनिकों ने भी ज्ञान प्राप्त किया है। भारतीय ज्ञान प्रणाली में जैसे सुश्रुत, चरक, आर्यभट्ट, वराहमिहिर, पाणिनि, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, चाणक्य, चक्रपाणि दत्ता, माधव, पतंजलि, नागार्जुन, गौतम, पिंगला, शंकरदेव, मैत्रेयी, गार्गी और तिरुवल्लुवर जैसे महान विद्वानों ने अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। भारतीय ज्ञान प्रणाली वैदिक काल से लेकर बौद्ध और जैन काल तक विद्यमान थी। इसके तहत महान गुरुशिष्य परंपरा के ज़रिये कई सालों से - प्राप्त ज्ञान को आत्मसात और विश्लेषण करके नए ज्ञान का संश्लेषण किया जाता था। आज के समय में प्रचलित भारतीय ज्ञान और विदेशों में की जाने वाली नई खोजों का उल्लेख भारतीय प्राचीन ग्रंथों में देखने को मिलती है, ये सभी प्रमाण भारतीय ज्ञान प्रणाली की समृद्धि का है। भारतीय ज्ञान प्रणाली प्राचीन और समकालीन ज्ञान का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में व्यवस्थित हस्तांतरण है। भारतीय शिक्षा प्रणाली के माध्यम से शोध, संवर्द्धन और नए उपयोगों के ज़रिये भारतीय ज्ञान परंपरा को पोषित और संरक्षित करने के लिए आवश्यक कदम उठाना ज़रूरी है। भारतीय ज्ञान प्रणाली गहन समझ को संरक्षित करके सामाजिक अनुप्रयोग की प्रेरणा देती है।

विश्लेषण: भारतीय ज्ञान प्रणाली)IKS) में तीन शब्द मिलकर बना है+ भारतीय : ज्ञान प्रणाली। +‘भारतीय शब्द अखंड भारत अर्थात् अविभाजित भारतीय उपमहाद्वीप को संदर्भित करता है। ‘ज्ञान’ शब्द ‘मौन ज्ञान’ को संदर्भित करता है अर्थात् ज्ञान की

इच्छा रखने वालों की बुद्धि से निहित है। यहाँ ‘प्रणाली’ शब्द से आशय सुव्यवस्थित कार्यप्रणाली और वर्गीकरण योजना से है ताकि ज्ञान के समूह तक सहजता से पहुँचा जा सके। भारतीय ज्ञान प्रणाली)IKS) में तीन शब्द शामिल हैंभारतीय :, ज्ञान और प्रणाली। इन्हें सूक्ष्मता से विश्लेषण कुछ इस प्रकार कर सकते हैं-

१. **भारतीय:** भारतीय ज्ञान प्रणाली में भारतीय शब्द को वृहद रूप में देखा गया है। यह अखंड भारत के अविभाजित भारतीय उपमहाद्वीप को संदर्भित करता है। यह वर्मा से लेकर पश्चिम में अफगानिस्तान, उत्तर में हिमालय और दक्षिण में हिंद महासागर तक के क्षेत्र को समाहित किए हुए है। चाणक्य ने मौर्य साम्राज्य की स्थापना में एक विशिष्ट भूमिका अदा की थी। संस्कृत व्याकरण रचने वाले पाणिनि ने प्राचीन भारत के तक्षशिला विश्वविद्यालय में शिक्षा अर्जित की थी जो अब पाकिस्तान के पंजाब प्रांत में मौजूद है। भारत की वैश्विक प्रतिष्ठा कला, संस्कृति, वास्तुकला, दर्शन, साहित्य, विज्ञान, इंजीनियरिंग, शिल्प और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक विशेष मुकाम हासिल किया था। अधिकांश जो विदेशी ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से भारत आए और इस ज्ञान को पश्चिमी देशों या और दुनिया के अन्य कोनों में अपने हिसाब से प्रसार किया।

२. **ज्ञान:** भारतीय ज्ञान प्रणाली संदर्भ में ज्ञान‘मौन ज्ञान’ को संदर्भित करता है। यह ज्ञान चाहने वालों की बुद्धि में निहित है। यह व्यक्तिगत अनुभवों में अंतर्दृष्टि, अवलोकन, वास्तविक जीवन की समस्याओं का सामना करने और उन्हें समाधान करने के माध्यम से प्राप्त किया जाता है। ज्ञान साहित्यिक और गैरसाहित्यिक रूप में - विद्यमान हो सकता है। इस मौन ज्ञान को नए सिद्धांतों और रूपरेखाओं के प्रस्ताव को व्यवस्थित रूप से स्थानांतरित किया जाताहै।

३. **प्रणाली:** भारतीय ज्ञान प्रणाली संदर्भ में प्रणाली से आशय है ज्ञान के एक समूह तक पहुँचने के लिए उपयोगीसुव्यवस्थित योजना। संहिताकरण और वर्गीकरण - ज्ञान साधक की आवश्यकता, रुचि और क्षमता पर आधारित होते हैं ताकि वह अंतर्निहित ज्ञान तक पहुँच सके। इससे उन्हें समग्र ज्ञान और जानकारी से अंतर्दृष्टि प्राप्त

करने में मदद मिलेगी कि विभिन्न ज्ञान घटक तार्किक रूप से एक दूसरे के पूरक हैं। भारतीय ज्ञान प्रणाली प्राचीन और समकालीन ज्ञान का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में व्यवस्थित हस्तांतरण करने का कार्य कर रही है। यह वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों का समाधान करने के लिए विभिन्न प्रकार के माध्यम से प्राचीन ज्ञान को संजोए हुए है। यह ज्ञान भारतीय भाषाओं और बोलियों में मौजूद है।

भारतीय ज्ञान परंपरा एक समृद्ध और प्राचीन धारा है, जो न केवल धार्मिक या सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विशेष स्थान रखती है, बल्कि यह जीवन के हर पहलू - विज्ञान, दर्शन, चिकित्सा, कला और समाजशास्त्र आदि में भी गहरी अंतर्दृष्टि प्रदान करती है। भारतीय ज्ञान परंपरा के चलते भारत का अतीत बहुत गौरवशाली रहा है। भारत सरकार ने भारतीय ज्ञान प्रणाली को (.एस.के.आई)पाठ्यक्रम में एकीकृत करने के लिए नई शिक्षा नीति 2020 के तहत एक बड़ा कदम उठाया है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली के उद्देश्य

भारतीय ज्ञान प्रणाली वर्तमान सामाजिक समस्याओं को संबोधित करने के लिए स्वास्थ्य, मनोविज्ञान, तंत्रिका विज्ञान, प्रकृति, पर्यावरण और मानव के सतत विकास सहित कई क्षेत्रों में अधिक अध्ययनअनुसंधान को समर्थन-, प्रोत्साहन तथा सुविधा प्रदान करना चाहती है। अतीत से सीखने और भारतीय ज्ञान प्रणालियों को एकीकृत करने का मुख्य लक्ष्य हमारी पुरानी ज्ञान प्रणालियों का उपयोग करना है, जो ज्ञान हस्तांतरण की एक अखंड परंपरा और एक विशिष्ट दृष्टिकोण की विशेषता रखते हैं, ताकि भारत और विश्व में मौजूदा और उभरती चुनौतियों का (भारतीय दृष्टि) समाधान किया जा सके। इस व्यापक ढांचे का उद्देश्य पारंपरिक भारतीय ज्ञान को समकालीन अनुसंधान पारिस्थितिकी तंत्र केतानेबाने में एकीकृत करना-, सहयोग को बढ़ावा देना और भारत की समृद्ध बौद्धिक विरासत के संरक्षण और प्रसार को मुख्यधारा में लाने के लिए सुनिश्चित करना है। शिक्षा क्षेत्र में भारतीय ज्ञान प्रणाली का एकीकरण एक महत्वपूर्ण पहल है जिसका उद्देश्य छात्रों के (आईकेएस)लिए

विविध और समग्र शिक्षण अनुभव पेश करना है ताकि समावेशी और सांस्कृतिक रूप से निहित दृष्टिकोण की ओर एक आदर्श बदलाव दर्शाया जा सके।

भारतीय ज्ञान परंपरा के कुछ प्रमुख स्तंभ कुछ इस प्रकार हैं-

श्रेणी	**विभाग**
विज्ञान, तकनीक, व्यापार और वाणिज्य (Science, Technology, Trade & Commerce)	लौह स्तंभ (Iron Pillar), प्राचीन धातु विज्ञान (Ancient Metallurgy), शल्य चिकित्सा(सुश्रुत) (Surgery, Sushruta), खगोल विज्ञान (आर्यभट्ट) (Astronomy, Aryabhatta), मानसशास्त्र)Pcychology), रसायन शास्त्र)Chemistry), विमान शास्त्र)Aeronautics), मापन विज्ञान)Measurement Science), वनस्पति शास्त्र)Botany).
स्वास्थ्य और कल्याण (Health & wellness)	आयुर्वेद (Ayurveda), योग (Yoga), पौधे आधारित दवा (Plant based medicine), वैद्यक शास्त्र)Medicine), ज्योतिष शास्त्र)Astrology).
अंक शास्त्र)Mathemetics)	शून्य (Zero), दशमलव प्रणाली (Decimal System), ज्यामिति)Geometry) वैदिक गणित (Vedic Math), अर्थशास्त्र)Arthashastra).
भाषा, साहित्य, और कला)Language Litreture, Art & Culture)	संस्कृत (Sanskrit), पाली)Pali), प्राकृत)Prakrit), पाणिनि व्याकरण (Panini Grammar), वेद (Veda), उपनिषद (Upnishad), चार उपांग)Four Upangas), नाट्यशास्त्र (Bharat's Natyashastra), चित्रकला)Drawing), वादन)Playing Instruments), दृश्यमान कला)Visual Art), नृत्यकला)Dance), हस्तकला)Craft work), मूर्तिकला)Sculpture).

वास्तुकला (Architecture)	वास्तु शास्त्र (Vastu Shastra), मंदिर इंजीनियरिंग (Temple Engineering), सीढ़ीदार कुएँ (Step Wells), किला निर्माण)Fort Construction), शहरी योजना)Urban Planning)
कृषि एवं पारिस्थितिकी (Agriculture & Ecology)	जैविक खेती (Organic Farming), जल छाजन(Rainwater Harvesting), पंचगव्य (Panchgavy).
दर्शन और तर्क (Philosophy & Logic(	न्याय (Nyaya), सांख्य)Sankhya), वैशेषिक)Vaisheshika), मीमांसा ज्ञानशास्त्र/)Epestemology), वेदांत विचारधारा(Vedant School of thought), जैन दर्शन)Jain Darshana), बौद्ध दर्शन)Buddha Darshana), आजीविक दर्शन (AjivakDarshana), चावार्क दर्शन (Chavark Darshana), दिग्नाग)Dignag)

भारतीय ज्ञान प्रणाली के सिद्धांत

भारतीय ज्ञान प्रणाली किसी भी क्रियाकलाप या गतिविधि को करते वक्त मुख्यतः तीन मूलभूत सिद्धांतों पर नज़र देती है-1. परम्परा 2. दृष्टि 3. लौकिकप्रयोजन।-

1.परम्परा: भारतीय ज्ञान प्रणाली की एक विशालकाय धरोहर और परंपरा को मानना है। भारतीय ज्ञान प्रणाली का उद्देश्य सदियों से चली आ रही ज्ञान, बुद्धि और समृद्धि को बनाए रखना और उसे अग्रसर करना है। इसका लक्ष्य प्राचीन काल से चली आ रही अखंड भारत की अखंड ज्ञान परंपराओं को उजागर करना है।

2.दृष्टि: भारतीय ज्ञान प्रणाली एक अलग दृष्टिकोण प्रदान करती हैं जो इस ज्ञान प्रणाली को 'भारतीय' बनाती हैं और वर्तमान भारत की उभरती चुनौतियों का समाधान करने में अत्यधिक मूल्यवान प्रतीत होती है। पारंपरिक ज्ञान को वर्तमान कालीन ज्ञान

के साथ जोड़कर, हम ऐसे समग्र समाधान की ओर अग्रसर हो सकते हैं जो किसी भी दृष्टिकोण की सीमाओं से परे हैं।

3.लौकिक:प्रयोजन- वर्तमान दौर में भारत और विश्व की उभरती चुनौतियों का समाधान करनेके लिए भारतीय ज्ञान प्रणाली की व्यावहारिक उपयोगिता औरप्रयोजन को जग जाहिर करना है। भारत के सामाजिक महत्व और उसकी ज़रूरतों को ध्यान में रखकर भारतीय ज्ञान प्रणाली को मुख्यधारा में लाकर समाज में ठोस बदलाव लाने का प्रयास करती है।

इस प्रकार भारतीय ज्ञान प्रणाली के सिद्धांत एक जीवंत परंपरा को विकसित करता है जो नए ज्ञान के निर्माण को बढ़ावा देती है और संचरण के आधार पर भविष्य के नवोन्मेषकों और विद्वानों को प्रेरणा देती है।

भारतीय ज्ञान प्रणाली और नई शिक्षा नीति 2020

भारत प्राचीन काल से ही प्राचीन ग्रन्थों, संस्कृति सभ्यता, प्राचीन संस्कृति और बहुभाषावाद के लिए जाना जाता रहा है। ये सारी चीजें हर भारतीय का हिस्सा ही नहीं बल्कि उसे अपने देश की सांस्कृतिक विरासत में प्राप्त हुआ है। भारतीय संस्कृति की समझ, संरक्षण और संवर्धन के लिए भारतीय ज्ञान प्रणाली का ज्ञान आवश्यक है। संस्कृत, संस्कृति और भारतीयता केवल शब्द नहीं बल्कि भारत की प्राचीन शिक्षा परंपरा से घनिष्ठता से जुडे हैं। व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, राष्ट्रीय उन्नति, तथा सभ्यता एवं संस्कृति के उत्थान के लिए शिक्षा आवश्यक है। भारत के महान शिक्षकों ने शिक्षा के इस गहन महत्व को समझा था। इसके परिणाम स्वरूप भारत में वैदिक काल में शिक्षा की एक सुन्दर व्यवस्था का निर्माण हुआ जिसका मुख्य आधार गुरुकुल शिक्षा व्यवस्था थी। ज्ञान के रूपों का विस्तार भारत के नालंदा, तक्षशिला, निक्रमशिला, उज्जैनी, काशी, वल्लभी आदि विश्वविद्यालयों द्वारा किया गया, जिसे आगे ले जाने के लिए केवल भारतीय विद्वानों ने कसमकस नहीं दिखाया है बल्कि भारत के बाहर विदेशी विद्वानों ने भी भरसक प्रयास दिखाया है। डॉ वसंत शिंदे अपनी पुस्तक .

'भारतीय ज्ञान प्रणाली' में बताते हैं - *"जब हमारी शिक्षा पद्धति भारतीय ज्ञान परंपरा पर आधारित थी और यूरोपीय लोगों के आगमन से पहले देश में भारतीय ज्ञान परंपरा का अध्ययन किया जाता था, तब लोगों के लिए अनुकूल और प्रासंगिक होने के कारण भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया में बहुत ही मजबूत अर्थव्यवस्था थी।"*[1] गार्गी, अपाला, ऋतंभरा, मैत्रिया लोपामुद्रा आदि विदुषी महिलाओं ने भी भारतीय ज्ञान परंपरा में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। वहीं बुद्ध, चरक, कात्यायन, आर्यभट्ट, शंकराचार्य, विवेकानंद, महात्मा गांधी, वाराहमिहिर, कणाद आदि ने ज्ञान और बुद्धि से इस विशालकाय भारत भूमि को धन्य किया है।

हमारी प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा अनादिकाल से सतत, दीर्घकालीन एवं शाश्वत रही है, जो संपूर्ण मानव जाति के कल्याण के लिए प्रयासरत है। वर्तमान नई शिक्षा नीति के सन्दर्भ में भारतीय ज्ञान परम्परा की समीक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। अनादि काल से अनेक विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते रहे और यह व्यवस्था गुरुशिष्य - परम्परा के रूप में भारत में लम्बे समय तक चलती रही। पूजा शर्मा के शब्दों में *"भारतीय ज्ञान प्रणालियों में ज्ञान, विज्ञान और जीवन दर्शन शामिल हैं जो अनुभव, अवलोकन, प्रयोग और कठोर विश्लेषण से विकसित हुए हैं। मान्यता और व्यवहार में लाने की इस परंपरा ने हमारी, शिक्षा, कला, प्रशासन, कानून, न्याय, स्वास्थ्य, विनिर्माण और वाणिज्य को प्रभावित किया है। भारतीय ज्ञान परंपरा एक ऐसी कच्ची सड़क के समान है जिस पर कई तरह के पत्थर मिलते हैं, पर साथ ही निर्धारित स्थान तक पहुँचने का मार्ग भी बनाती है।"*[2] भारत की इस महान शैक्षिक परंपरा ने व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर ध्यान केंद्रित किया और अखंडता, विनम्रता, आत्मनिर्भरता, अनुशासन और आपसी प्रेमसम्मान जैसे मूल्यों पर जोर दिया। भारत की प्राचीन - शिक्षा प्रणाली ने विशाल प्राचीन साहित्य को संरक्षित किया और ज्ञान को बढ़ावा दिया। भारतीय दर्शन के अनुसार मनुष्य की सोच की कई सीमाएं हैं, लेकिन पश्चिमी ज्ञान इसका विरोध करता रहा है और ज्ञान की एक ही धारा का जश्न मनाता रहा है और

उसका प्रसार करता रहा है। हम सब आज भी उस धारा का हिस्सा बने हुए हैं। हमारी शिक्षा प्रणाली, जो प्राचीन काल से प्रचलित है, हमेशा से ही भारतीय ज्ञान को दबाने और पश्चिमी ज्ञान को आगे बढ़ाने का प्रयास करती रही है। यही कारण है कि स्वाधीनता प्राप्त करने के इतने साल बाद भी हम अपने दार्शनिक, आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक ज्ञान समन्वयसामाजिक समरसता से कोसों दूर हैं। भारत के विकास के - लिए हमें अपने पारंपरिक ज्ञान को जानना, समझना, फैलाना और अर्जित करना अत्यंत आवश्यक है। नई शिक्षा नीति 2020 द्वारा भारतीय ज्ञान प्रणाली को शिक्षा व्यवस्था में स्थान देने से हमें भारतीय शिक्षा व्यवस्था को और बेहतर बनाने का अवसर मिलेगा। भारतीय ज्ञान प्रणाली को अगर हम सफलतापूर्वक लागू करके दुनिया के सामने श्रेष्ठ शिक्षा का एक मिसाल खड़ा कर पाएं तो भारत को विश्वगुरु बनने से कोई नहीं रोक सकता है।

नई शिक्षा नीति 2020 में भारतीय ज्ञान प्रणालियों का एकीकरण भारत की शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तनकारी बदलाव लाने की क्षमता रखता है। यह नीति शिक्षा के सभी स्तरों पर पाठ्यक्रम में भारतीय ज्ञान प्रणाली के एकीकरण को प्रोत्साहित करने में विशेष भूमिका अदा करेगी। ज्ञान के विविध रूपों को स्वीकार और शामिल करके यह नीति शिक्षा के लिए अधिक समावेशी और बहुलवादी दृष्टिकोण को बढ़ावा देगी जो छात्रछात्राओं- को विविधता पूर्ण शिक्षण की हितों और जरूरतों को पूरा करने में सहयोग करेगी। भारतीय ज्ञान प्रणालियों पर एक वैकल्पिक पाठ्यक्रम माध्यमिक विद्यालयों में छात्रों के लिए उपलब्ध कराया जाएगा, जिससे उन्हें उन समृद्ध परंपराओं को जानने का विकल्प मिलेगा। नई शिक्षा नीति यह विकल्प प्रदान करती है कि यूजी या पीजी कार्यक्रमों में प्रत्येक छात्रछात्राओं को भारतीय ज्ञान प्रणाली में क्रेडिट - पाठ्यक्रम लेना चाहिए। भारतीय ज्ञान प्रणाली क्रेडिट का कम से कम पचास प्रतिशत प्रमुख विषय से संबंधित होना चाहिए और शिक्षण का माध्यम कोई भी भारतीय भाषा हो सकती है। यह शिक्षा नीति राज्योंकेंद्रशासित प्रदेशों को शिक्षार्थियों के लिए /

समर्पित पाठ्यक्रम तैयार करने के लिए अपनी मूल संस्कृतियाँ, कलाओं, शिल्प, परंपराओं आदि का दस्तावेजीकरण करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। नई शिक्षा नीति के दिशानिर्देशों में पाठ्यक्रम एकीकरण-, संकाय प्रशिक्षण, कलाकारोंकारीगरों - के साथ सहयोग, भारतीय विरासत और संस्कृति पर आधारित पाठ्यक्रमों की शुरुआत, अनिवार्य क्रेडिट घटक, क्षेत्रीय पाठ्यक्रमों की रूपरेखा, सहयोग का दायरा, ऑनलाइनओडीएल पाठ्यक्रम/, भर्ती, नियमित संकाय प्रशिक्षण, व्यावहारिक शिक्षण अवसर, अनुसंधान और नवाचार के लिए समर्थन और जनभागीदारी को बढ़ावा देने जैसे विभिन्न पहलुओं को आगे बढ़ाने का सुअवसर प्रदान होगा। नई शिक्षा नीति 2020 भारतीय नागरिकों में भारतीय ज्ञान प्रणाली के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा करने में सहयोग करेगी। प्रशिक्षण कार्यक्रमों और पुनश्चर्या पाठ्यक्रमों के माध्यम से भारतीय ज्ञान प्रणाली की खोज में रुचि को बढ़ावा देना और उसके प्रति जागरूकता फैलाने का कार्य कर नई शिक्षा नीति कर रही है।

नई शिक्षा नीति 2020 के साथ भारतीय ज्ञान प्रणाली का एकीकरण अंतर्निहित समकालीन सामाजिक मुद्दों को समझने और उन मुद्दों के अनुरूप अनुसंधान का अवसर प्रदान करने में सहयोगी भूमिका निभाएगी। यह विभिन्न हितधारकों के बीच समृद्ध व विविध स्वदेशी ज्ञान के विकास- समझ को बढ़ावा देगी और आधुनिक तकनीक की मदद से पारंपरिक ज्ञान को फिर से जीवंतता प्रदान करेगी। डॉ. देशबंधु लिखते हैं - *"आज के इस भौतिकवादी युग में सम्पूर्ण विश्व पुनः इसी भारतीय ज्ञान और विज्ञान की ओर आकृष्ट हो रहा है क्यों कि केवल भारतीय ज्ञान परंपरा में ही मानव मात्र के विकास के साथसाथ प्रकृति के संरक्षण को भी प्राथमिकता दी गई है। - प्रकृति को हानि पहुंचाकर मानव मात्र का विकास भारतीय ऋषियों को कदापि स्वीकार्य नहीं रहा।"*[3] नई शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा के विकास और अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए रूपरेखा को निर्धारित किया है। नवीन अनुसंधान, शिक्षा और भारतीय ज्ञान प्रणाली के प्रसार को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ भारतीय

ज्ञान प्रणाली केंद्र स्थापित किए जाने की भी योजना बनाई गई है। चल रही अंतःविषय अनुसंधान परियोजनाओं में प्राचीन धातु विज्ञान, प्राचीन नगर नियोजन, जल संसाधन प्रबंधन और रसायन शास्त्र पर ध्यान केंद्रित करने वाली उच्च अंतः विषय अनुसंधान सुविधाएं भी शामिल हैं। भारतीय ज्ञान प्रणाली पर इंटर्नशिप को बढ़ावा और संकाय विकास की पेशकश की गई है। भारतीय ज्ञान प्रणाली ने अपने पाठ्यक्रम में पारंपरिक ज्ञान परंपरा को शामिल किया है तथा लाखों पुस्तकों को डिजिटल बनाने का संकल्प भी लिया गया है। अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के लिए एनसे भी जोड़ा .एफ.आर. के माध्यम .एफ.आर.गया है। भारतीय ज्ञान परंपरा से संबंधित अनुसंधान के लिए एन से समर्पित अनुदानों के माध्यम से प्राथमिकता अनुसंधान निधि प्रस्तावित करने की सिफ़ारिश है। अंतरविषयक भारतीय ज्ञान परंपरा अनुसंधान में शीर्ष प्रतिभाओं को - आकर्षित करने के लिएसरकारी परिकल्पोंयोजनाओं से जोड़कर भारतीय ज्ञान / परंपरा को अग्रसर करने का प्रस्ताव है।भारतकेंद्रित अनुसंधान के लिए भारतीय - ऐतिहासिक अनुसंधान परिषद् जैसे निकायों के माध्यम से वैश्विक सहयोग तक पहुँचने के लिए संस्थानों को प्रोत्साहित करने की योजना को देख सकते हैं। इसके साथ नई शिक्षा नीति में शिक्षार्थियों द्वारा भारत की समृद्ध विविधता के ज्ञान को प्रत्यक्ष आत्मसात करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। देश के विभिन्न क्षेत्र में छात्र-छात्राएँ पर्यटन जैसी गतिविधियाँ को प्रोत्साहित किया जाएगा।'एक भारत श्रेष्ठ भारत' पहल के तहत, सौ पर्यटन स्थलों की पहचान की जाएगी, जहां शैक्षणिक संस्थान छात्र-छात्राओंको इन क्षेत्रों के इतिहास, कला, साहित्य, ज्ञान, शोध व अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किए जाएंगे। भारतीय ज्ञान प्रणाली प्रभाग 2047 तक लागू करने के विजन और मिशन से आगे बढ़ने के लिए तत्पर है। बुद्धिजीवियों और विशेषज्ञों के सहयोग से एक समृद्ध भारतीय ज्ञान प्रणाली को शुरू करने के लिए रूपरेखा तैयार है ताकि भारतीय ज्ञान प्रणाली के विशाल ज्ञान भंडार का लाभ उठाकर समकालीन मुठभेड़ को संदर्भित करने के साथसाथ- अनुसंधान को भी बढ़ावा और समर्थन मिल

सकेगा। भारतीय ज्ञान प्रणाली अनुसंधान पारिस्थितिकी तंत्र के तानेबाने में एकीकृत - करके भारतीय ज्ञान प्रणालीको फिर से जीवंत और मुख्यधारा में लाना नई शिक्षा नीति 2020 का ध्येय है। आने वाले समय में इस नई शिक्षा नीति के जरिए भारतीय ज्ञान प्रणाली को वैज्ञानिक तरीके से स्कूल और उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रमों में शामिल किया जाएगा। भारतीय ज्ञान प्रणाली पाठ्यक्रम में आदिवासी ज्ञान, स्वदेशी और पारंपरिक शिक्षण विधियों को भी शामिल किया जाएगा। नई शिक्षा नीति)NEP)2020, शिक्षार्थियों के समग्र विकास का उपयोग करके भारतीय शिक्षा प्रणाली को बदलने का श्री गणेश हो चुका है। यह रूपरेखा शिक्षा प्रणाली के विकास के लिए एक व्यापक और एकीकृत रणनीति प्रदान करेगी। भारतीय ज्ञान प्रणाली कार्यक्रमों के माध्यम से युवाओं व प्रतिभाओं को कौशल प्रदान करने में और रोजगार के अवसर सृजन करने में सहयोग करेगी।

निष्कर्ष: प्रस्तुत शोधपत्र में विश्लेषण करने से यह ज्ञात होता है कि नई शिक्षा नीति 2020 वर्तमान परिदृश्य में प्रासंगिक है, जिसमें भारतीय ज्ञान प्रणाली की उल्लेखनीय भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। नई शिक्षा नीति 2020 भारतीय ज्ञान प्रणाली को वर्तमान शिक्षा की ज़रूरतों से जोड़ने का एक सुनियोजित प्रयास है। भारतीय ज्ञान प्रणाली व्यक्ति को कर्तव्य की भावना, मन में स्थिरता और तनाव प्रबंधन आदि को समायोजित करने के लिए व्यावहारिक मार्गदर्शन प्रदान करने के साथसाथ विभिन्न - विज्ञान-ज्ञान, सांसारिक और रहस्यों को समझने के लिए सहायता प्रदान भी करता है। यह शिक्षा नीति विद्यार्थियों के बहुआयामी विकास सुनिश्चित करने हेतु आवश्यक सुधार की कामना करती है। नई शिक्षा नीति 2020 विद्यार्थी केन्द्रित है। यह शिक्षा संरचना, शिक्षण प्रशिक्षण और परीक्षा प्रणाली में और अधिक सुधार लाकर प्राचीन भारतीय ज्ञान प्रणाली में निहित ज्ञान को नवीन पाठ्यचर्या में लाने के लिए आग्रही है। यह शिक्षा नीति 5+3+3+4 के प्रारूप को अपनाते हुए विद्यार्थियों के शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, चारित्रिक, नैतिक एवं मानवीय मूल्यों के

विकास को महत्वपूर्ण मानती है। यदि यह नई शिक्षा नीति का क्रियान्वयन सफल व सुनियोजित रुप से होता है तो यह शिक्षा नीति निश्चित रूप से भारत को वैश्विक पटल पर एक नए आयाम प्रदान करेगी। इस प्रकार भारतीय ज्ञान प्रणाली में जो ज्ञान का विशाल भंडार है वह नए आलोक में विश्व के कल्याण और मानवता के उद्धार के लिए एक अग्रणी भूमिका निभाने के लिए आग्रही होगा।

संदर्भ सूची:

1. शिंदे, डॉवसंत ., भारतीय ज्ञान प्रणाली, भीष्म प्रकाशन, पुणे, संस्करण-2022, पृष्ठ संख्या-4

2. सिरोला, डॉदेबकी ., संपादक, भारतीय ज्ञान परंपरा एवं शिक्षा, शर्मा पूजा, भारतीय ज्ञान परंपरा के परिप्रेक्ष्य में आधुनिक प्रोद्योगिकी की शैक्षणिक विकास में प्रासंगिकता, कुणाल बुक्स, नवीन संस्करण, पृष्ठ संख्या-80

3. यादव, डॉनीलम ., प्रधान संपादक, भारतीय ज्ञान परंपराविविध आयाम :, इंशा पब्लिकेशन, प्रथम संस्करण-2023, दिल्ली, भूमिका, पृष्ठ संख्या- 12

सहायक प्राध्यापक, श्री रामकृष्ण बी) कॉलेज .टी .Govt. Aided.), दार्जिलिंग
संपर्क -27 गांधी रोड, बागमारी हाउस, दार्जिलिंग -734101,
पोस्ट ऑफिसदार्जिलिंग -, पश्चिम बंगाल
ई - मेल-anandpcdas@gmail.com, 9382918401, .9804551685

गुलजार के गीत और फिल्म

-डॉ.करन सिंह ऊटवाल

भारत देश एक सांस्कृतिक देश है । यहाँ की संस्कृति प्रत्येक क्षेत्र में समृद्ध है इस संस्कृति को अभिव्यक्ति देने वाले गीत हैं । यहाँ जन्म से लेकर मृत्यु तक शायद ही कोई ऐसा संस्कार हो जिसमें गीत शामिल ना हो, फिर चाहे वह लोकगीत हो या शास्त्रीय संगीत पर आधारित गीत हो ।

सुरेश गौतम कहते हैं- *मानवता को हर गीत ने जगाया है वह वेद में हो, कुरान में हो, बाइबिल में हो गुरु ग्रंथ साहिब में हो, अथवा लोकगीत हो ।* (लोक साहित्य सुरेश गौतम पृष्ठ 54)

आज फिल्मी गीतों ने सभी प्रकार के गीतों को अपने में समेट लिया है । चाहे वह लोकगीत हो, शास्त्रीय संगीत पर आधारित गीत हो, कव्वाली हो, भजन हो या किसी और प्रकार के गीत हो । सभी गीत फिल्मों में मिल जाएंगे ।

बहुत से ऐसे साहित्यकार रहे हैं जो फिल्मी गीतों से भी जुड़े रहे हैं । गुलजार साहब भी उनका अपवाद नहीं है जैसे कवि प्रदीप शैलेंद्र, नीरज, नरेंद्र शर्मा, हरिवंश राय बच्चन आदि सभी ने फिल्मी में गीत भी लिखे हैं ।

अगर निर्देशक के रूप में गुलजार की जिंदगी का सफर देखें तो मेरे अपने से उनका परिचय हुआ उनकी कोशिश से अचानक एक ऐसी आंधी आई जो अपने साथ ढेर सारी खुशबू डोकर लाई जिससे मौसम खुशनुमा हो गया जैसे डूबते को किनारा मिल गया । जहाँ बैठकर किताब पढ़ने का मजा आ गया । मीरा के भजन का आनंद आ गया मेवा में अंगूर और नमकीन का भी स्वाद चखा । एक तरह से लोगों से लोगों को खुश करने की इजाजत ली उनके अनुसार लिबास बदला लेकिन आगे बढ़ते रहे । लोगों को आकर्षित करते रहे माचिस के माध्यम से आतंकवाद पर रोशनी डाली और हु तू तू से अपनी जिंदगी में जीतते चले गए ।

उन्हें 7 से अधिक राष्ट्रीय पुरस्कार मिल चुके हैं

1. सर्वश्रेष्ठ पटकथा- कोशिश (1972)
2. सर्वश्रेष्ठ निर्देशन- मौसम (1976)
3. सर्वश्रेष्ठ गीत मेरा कुछ सामान- इजाजत (1988)
4. सर्वश्रेष्ठ गीत यारा सिली सिली- लेकिन (1991)

5. सर्वश्रेष्ठ फिल्म- माचिस (1996)

6. सर्वश्रेष्ठ वृत्तचित्र पंडित भीमसेन जोशी और उस्ताद अमजद अली खान (1990)

कविता कहानी उपन्यास नाटक आदि पर जब फिल्म बनती है या कविता को फिल्म में गीत के रूप में ढाल दिया जाए तो साहित्य वाले उस गीत की चर्चा शायद ही करते हैं। बल्कि उसे यह कह कर छोड़ देते हैं कि यह तो फिल्म की बात है। उस फिल्मी गीत को एक तरह से साहित्य से बाहर कर देते हैं। उसकी एक तरह से ऑनर किलिंग हो जाती है। जैसे अंतर्जातीय या अंतर धर्म में विवाह करने पर होता है जबकि वह भी साहित्य का ही एक रूप है।

लेकिन आजकल उन पर भी चर्चा होने लगी है। जो कि अच्छा संकेत है। गुलजार साहब को शायद ही कोई ऐसा सम्मान है जो ना मिला हो राष्ट्रीय पुरस्कार, फिल्मफेयर पुरस्कार, ऑस्कर पुरस्कार लाइफटाइम अचीवमेंट पुरस्कार, दादा साहब फाल्के पुरस्कार आदि सभी सम्मान गुलजार साहब को मिल चुके हैं।

गुलजार साहब अपने आप में इंद्रधनुष्य हैं। वे साहित्यकार भी हैं, निर्देशक भी है, संवाद लेखन भी हैं, फिल्मकार भी हैं, गीतकार भी हैं आदि । सभी रंग उनमें भरे हुए हैं।

आज हम विशेषकर उनके गीतों की चर्चा करेंगे गुलज़ार दरअसल एक बुलंदी का नाम है। लोगों के दिलों में उनके लिए अलग ही सम्मान है। गुलजार लोगों की नस नस से वाकिफ है उनको पता है कि लोगों को कब क्या चाहिए। उनके गीतों में एक से एक गंभीर विषयों के साथ साथ रोमांस और हल्के फुल्के विषय आदि सभी variety मौजूद हैं।

रोमांटिक गीत

1. एक सूरज निकला था, कुछ पारा पिघला था, जब दिल से आह निकली थी दिल से-दिल से

2. आजा माहिया- फिजा

3. आपकी आंखों में कुछ महके हुए से राज हैं- घर

4. बोल ना हल्के हल्के -झूम बराबर झूम

5. हमको मालूम है इश्क मासूम है -जानेमन

6. हमसफर मेरे हमसफर पंख तुम- पूर्णिमा

लोक धुनों पर आधारित गीत

1. केसरिया बालमा ओ जी पधारो हमारे देस- लेकिन

2. चप्पा चप्पा चरखा चले- माचिस

दार्शनिक गीत Philosphical Songs

1. आने वाला पल जाने वाला है- गोलमाल

2. एक अकेला इस शहर में रात में और दो पहर में आबो दाना ढूंढता है- घरौंदा

3. ऐ जिंदगी गले लगा ले- सदमा

4. तुझसे नाराज़ नहीं जिंदगी हैरान हूं मैं- मासूम

ग़ज़ल

1. जब भी ये दिल उदास होता है -सीमा

प्रार्थना गीत

1. हमको मन की शक्ति देना मन विजय करें -गुड्डी

देश भक्ति गीत

1. ए मेरे प्यारे वतन ऐ मेरे बिछड़े चमन- काबुलीवाला

2. ऐ वतन वतन मेरे आबाद रहे तू- राज़ी

मस्ती भरे गीत

1. बीड़ी जलाई ले जिगर से पिया- ओमकारा

2. जुबां पर लागा नमक इश्क का- ओमकारा

3. छैया छैया- दिल से

4. बरसो रे मेघा मेघा- गुरु

5. कजरारे कजरारे- बंटी और बबली

बच्चों के गीत

गुलजार ने बच्चों के लिए भी गीत लिखे हैं। जो बच्चे कभी भूल नहीं पाते।

1. जंगल जंगल बात चली है पता चला है चड्डी पहन के फूल खिला है -जंगल बुक सीरियल

2. लकड़ी की काठी, काठी पे घोड़ा घोड़े की दुम पे जो मारा हथोड़ा -मासूम

गुलजार के गीतों के बिंब बिल्कुल नए होते हैं। उनके गीतों में दिन कभी खाली बर्तन हो जाता है, तो कभी खाली सड़कों पर धुआं आंसू बन जाता है। कभी दिल धड़कने

की बजाय आसामी में हूम हूम करता है , कहीं सिली सिली बिरहा की रात जलती है , कहीं हँसी सुन सुनकर फसल पकने लगती है। कभी पत्ते दिल बन जाते हैं।

इस तरह उनकी कल्पना में नए-नए बिंब उभरते हैं। वे अभिधा से अधिक लक्षणा और व्यंजना द्वारा अपने गीतों को अभियुक्ति प्रदान करते हैं। उनके गीतों की भाषा पात्रों के अनुकूल होती है। इसीलिए कहीं

मोरा गोरा अंग लेइ ले ,तो कहीं

बीड़ी जलाई ले तो कहीं

छैया छैया है।

कहीं आतंकवाद की माचिस को दर्शाते हैं कि इससे कहीं आग भड़क ना जाए, तो कहीं हल्के से बीड़ी को भी जलाते हैं। वे आज के युवा वर्ग की ख्वाहिश से भी वाकिफ है। इसीलिए कहीं कजरारे नैनो की बात करते हैं, तो कहीं नमक इश्क का चखाते हैं।

उन्होंने गुड्डी में जो गीत लिखा हमको मन की शक्ति देना आज अनेक स्कूलों में प्रार्थना गीत के रूप में गाया जाता है। जिंदगी को देखने का गुलज़ार का अपना दिलकश अंदाज है।

उनके गीत लोगों को सोचने पर मजबूर करते हैं। उनके गीत अधिकतर लोगों की कहानी होते हैं। उनके गीतों में उनकी संवेदनशीलता प्रकट होती है। उनकी सोच की गहराई का पता चलता है जैसे

1. तुम्हें जिंदगी के उजाले मुबारक- पूर्णिमा
2. वो शाम कुछ अजीब थी- खामोशी
3. हमने देखी है इन आंखों की महकती खुशबू -खामोशी
4. तुझसे नाराज नहीं है जिंदगी हैरान -मासूम

और भी बहुत से गीत हैं जिनमें हमें जिंदगी के विविध पहलुओं के दर्शन होते हैं।

गीत के हिट होने का श्रेय" वे गीत की धुन को देते हैं यह उनका बड़प्पन है वे कहते हैं कि गीत की धुन घोड़े की तरह है जिस पर गीत के बोल लगाम का काम करते हैं और गीत का दृश्यांकन सवार का काम करता है। इन तीनों के मिले-जुले असर का जादू लोकप्रियता की कुंजी है। फिर भी कोई गीतकार या संगीतकार यह नहीं बता सकता

कि उसका गीत या उसकी धुन लोकप्रिय होगी या नहीं। अगर यह बता पाना संभव होता तो गीतकार तो पीर बन जाते और सब का भविष्य बताने लगते।

वैसे तो गुलजार के बहुत से गीत सर्वश्रेष्ठ हैं। लेकिन जो पुरस्कार देने वालों को सर्वश्रेष्ठ लगे और फिल्म फेयर पुरस्कार प्रदान किए गए वे हैं-

1. दो दीवाने शहर में- घरौंदा (1977)
2. आने वाला पल जाने वाला है- गोलमाल (1979)
3. हजार राहें मुड़ के देखी- थोड़ी सी बेवफाई (1980)
4. तुझसे नाराज नहीं जिंदगी हैरान हूं मैं- मासूम (1984)
5. मेरा कुछ सामान तुम्हारे पास है –इजाज़त (1988)
6. छैया छैया -दिल से (1988)
7. यारा सिली सिली बिरहा की रात का जलना- लेकिन (1991)
8. साथिया –साथिया (2002)

इन गीतों में

1. मेरा कुछ सामान तुम्हारे पास है –इजाज़त (1988) तथा
2. यारा सिली सिली बिरहा की रात का जलना- लेकिन (1991)

इन दो गीतों को फिल्म फेयर के साथ साथ राष्ट्रीय पुरस्कार भी प्रदान किए गए हैं।

और जो दुनिया का सबसे बड़ा ऑस्कर अवॉर्ड माना जाता है, वह आपको 2009 में **जय हो** गीत पर मिला।

पाश्चात्य काव्यशास्त्र के विद्वान सैमुअल टेलर कॉलेरिज (1772-1834) कहते हैं हमारी कल्पना जो कला में परिवर्तित होती है। वह विरोधी और अलग-अलग चीजों का खूबसूरत संयोजन कर देती है। उनमें कोई अंतरंग संबंध नहीं होता है। लेकिन लेखक की कल्पना उन्हें जोड़ देती है। जैसे गुलजार साहब ने गीत लिखा है

1. चुन्नी लेके सोती थी कमाल लगती थी 2
   बीबा बीबा वे
   पानी में जलता चिराग लगती थी
   बीबा तेरी याद ना टले

यहां पानी में जलता चिराग और नायिका का चुन्नी लेकर सुना दो अलग-अलग चीजें हैं। लेकिन उनको ऐसे जोड़ दिया है जैसे कि वह उसी का प्रतीक है।

दुनिया परिवर्तनशील है। इसीलिए सब जगह परिवर्तित होता रहता है और गुलज़ार वक्त के साथ साथ चलने वाले गीतकार हैं। इसलिए उन्होंने आज की युवा पीढ़ी के लिए भी ऐसे गीत लिखे जिसके कारण आज की पीढ़ी के भी चहेते गीतकार हैं। उनके गीत सुनकर आज भी हुआ पीढी थिरकती है। जैसे

1. तू ही तू, तू ही तू सतरंगी रे-दिल से
2. सपने में मिलती है ओ कुड़ी मेरे सपने में- सत्या
3. मठरू की बिजली- मठरू की बिजली
4. कजरारे कजरारे तेरे कारे कारे नैना- बंटी और बबली

और

5. जय हो

आज भी वे इतना जिंदादिल है कि लिखते हैं दिल तो बच्चा है जी

इन सब के अलावा हमारी यूनिवर्सिटी का मानू तराना

ये जामिया ए ज़बाने उर्दू, ज़बान ए उर्दू का आशियाँ है ...

इस तरह खुद श्वेत में रंग में रहकर लोगों को ज़िंदगी के रंग बाँटते रहते हैं।

संदर्भ ग्रंथ-

1.मेरा कुछ सामान-गुलज़ार

2.हिन्दी साहित्य का वैश्विक स्तर पर महत्व- संपा. राजेश अग्रवाल

3.लोक साहित्य- सुरेश गौतम

4.पाश्चात्य काव्यशास्त्र-देवेन्द्र नाथ शर्मा

5.Wikipedia

प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी हैदराबाद-32

भाषाई कौशल से परिलक्षित बहुभाषिक रामकाव्य
(रामकथा की विविधता के विशेष संदर्भ में)

-दीपेन्द्र कुमार

सारांश- भक्ति साहित्य के प्राण भगवान श्रीराम सनातन सभ्यता के प्रतीक हैं। प्रभु श्रीराम के कथा साहित्य का आज वैश्विक स्तर पर अधिपत्य है। संसारभर में आज श्रीराम जी की विभिन्न भाषाओं में रामकथा का भरपूर साहित्य उपलब्ध है। भक्ति साहित्य की रामकथा परंपरा में लेखकों, रचनाकारों, कवियों एवं साहित्यकारों ने अपनी मनोभाषिकता एवं भक्तिपूर्ण भाषाई कौशल क्षमता के माध्यम से श्रीरामकथा का वैश्विक विकास किया है। रचनाकारों द्वारा विभिन्न भक्ति कौशलों के आयाम प्रदान करते हुए अपने भाषाई एवं व्यक्तिगत विचारों से इसे प्रस्तुत कर समाज को उपलब्ध कराया है। साहित्यकारों एवं भक्ति समुदाय की धार्मिक एवं प्रचार की नित्य परंपरा ने भी रामकथा साहित्य की प्रस्तुति में अपने भाषाई एवं बौद्धिक कौशल क्षमता से बखूबी प्रसार किया है।

बीज शब्द- भक्ति, साहित्य, रामकाव्य, बहुभाषिक, भाषाई, कौशल, रामकथा, साहित्य, काव्य, श्रीरामचरितमानस, श्रीवाल्मीकि, भावाव्यक्ति, भक्ति साहित्य, वैश्विक।

आलेख- कवियों, साहित्यकारों, लेखकों एवं रचनाकारों के माध्यम से भक्ति साहित्य में रामकाव्य तथा रामकथा पर होने वाले नित्य कार्यों से व नवीन रचनाकारों से नवीन आयाम स्थापित होते आ रहे हैं। विभिन्न भाषाई विद्वानों, साहित्यकारों, रचनाकारों एवं अनुवादकों के श्रीरामकथा साहित्य के विकास कार्य के साथसाथ भक्ति की नवीन मानसिक और बौद्धिक कौशलपूर्ण शाखाओं का भी उदय - होता आ रहा है। भक्ति साहित्य के विविध रचनाकारों की विलक्षित मानसिक एवं मनोभाषिक बिंबता की तुलनात्मकता से भक्ति साहित्य में एक नया काव्य नित्य जन्म लेता है। जिसमें समाहित बिंदुओं पर रचनाकारों की अपनी दृष्टि प्रस्तुति अथवा

अभिव्यक्ति दर्शायी गई होती है। इस प्रस्तुति में लेखक की भक्ति कौशल की विकसित वैचारिकता का भेद भी प्रस्तुत होता है। इसे भक्ति के नवीन कौशल विकास की श्रेणी में रखा जा सकता है। कौशल विकास का आधार निम्नपंक्तियों से परिलक्षित हो जाता है-

तुलसी जा संसार में सुख-दुख सबको होय।-
ज्ञानी काटे ज्ञान से मूर्ख काटे रोय।।

भक्ति साहित्य के दो रचनाकारों के काव्य आलोपन एवं विचारोपरांत एक नवीन साहित्य का निर्माण अथवा उदय होना स्वाभाविक है। दोनों की ही संयुक्त भावाभिव्यक्ति से एक नवीन भावामिश्रित काव्य साहित्य का सृजन होता है। इसी प्रकार से श्रीरामकथा का वैश्विक भाषाई स्तर का निर्धारिण रचनाकारों एवं कवियों के भाषाई कौशलों का आधार बना है। भक्ति संप्रदाय के सत्संग में संत, साधु, मुनि, ऋषि, विप्र, भक्त आदि की संगत एवं उनके तार्किक एवं बौद्धिक संप्रेषण से नवीन भक्ति शाखा एवं रचना कार्य को दिशा प्रदान करती है। इस भक्ति शाखा की दिशा में आगे बढ़ने पर या इसका अनुसरण करने वाले साधकों एवं शिष्यों के कौशल विकास अपने अधिष्ठाता एवं गुरूओं के निदानिर्देश, आचरण, वाणी एवं उनके सत्संग पर निर्भर होते हैं।

श्रीरामचरितमानस तुलसीदास की अनुपम रचना है। इस रचना का आधार श्रीवाल्मीकि जी की श्रीरामायण है। बावजूद इसके तुलसी की प्रस्तुति में उनके आराध्य भगवान श्रीराम की भक्ति वैचारिकता में भाषाई व लेखन कौशल विकास की छवि स्पष्ट दिखाई देती है। तुलसी जी की अवधी हिंदी भाषाई रचना भाषिकता एवं रसास्वादन में भक्ति प्रस्तुति का अपना ही एक विरक्त भाव प्रदर्शित होता है। उत्तर भारत में श्रीरामकथा का गहरा प्रभाव है। श्रीरामचितमानस कथा साहित्य को उत्तर भारत की जनता में धार्मिक आस्था का प्रभुत्व प्रदान किया हुआ है। घर-घर में श्रीरामचरितमानस को स्थान प्राप्त है। घर, मंदिर, देवालयों, पुस्तकालयों व प्रतिष्ठानों आदि में भी श्रीरामचरितमानस की स्थापना यहां आम रूप में देखी जा सकती है। श्रीरामकथा का भक्ति प्रवाह इतना प्रबल है कि रामकथा, अखंड रामायण, सुंदर काण्ड

का वाचन प्रायः दैनिक जीवन में आम है। व्यक्ति पारिवारिक एवं सामूहिक स्तर पर ऐसे धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन करते रहते हैं, साथ ही कथावाचक रामकथाओं के भाव एवं समरसता को अपने ही अंदाज में प्रस्तुत करते हैं।

ज्ञानी ते ज्ञानी मिले, करै ज्ञान की बात।
मूरख से मूरख मिलै, कै घूँसा कै लात।।

श्रीरामकथा के विशाल भक्ति साहित्य में रचना कौशल का विकास का स्पष्ट दर्शन श्रीरामचरितमानस में होता है। जहां अवधी भाषा की श्रीरामचरितमानस, संस्कृत की श्रीरामायण से अवतरित हुई है और वर्तमान में श्रीरामचरितमानस की लोकप्रियता श्रीरामायण से अधिक लोकप्रिय अथवा व्यापक है और वैश्विक स्तर पर विभिन्न भाषाओं में आज उपलब्ध है। संस्कृत भाषा में रचित श्रीवाल्मीकि रामायण को अवधी हिंदी में रूपांतरण कर श्री तुलसीदास जी ने नवीन संजीवनी देकर इसे उभारा है। श्रीरामचरितमानस में रामायण से विरक्त कई रोचक तथ्य हैं। श्रीरामचरितमानस को तुलसीदास दुबे ने वीं शताब्दी में कलियुग में अवधी में लिखा था जब क्रूर मुगल 15 शासन कर रहे थे।

श्रीरामचरितमानस को 'चैपाई' लिखा गया है। में (शब्दाडंबर पद्य) श्ृरीरामचरितमानस अवधी में रामायण का एक छंद है। श्रीरामचरितमानस काव्य को अध्याय को कांड के नाम से सात भागों में विभाजित किया गया है, रामायण से रामचरितमानस में केवल यह अंतर है कि रामायण में 'युद्ध कांड' का नाम बदलकर श्रीरामचरितमानस में 'लंका कांड' रखा गया है। दशरथ की तीन पत्नियां थीं। सीता के स्वयंवर का उल्लेख, प्रतियोगिता, लक्ष्मण रेखा और भगवान परशुराम। श्रीरामचरितमानस में कहानी सीता के साथ समाप्त होती है जब माता पृथ्वी से उन्हें प्राप्त करने के लिए कहती हैं और राम अपने मानव रूप को त्यागकर आकाशीय दुनिया के लिए प्रस्थान करते हैं। तुलसी श्रीरामचरितमानस में राम को शिव की पूजा करते हुए भी दिखाया गया है।

वैश्विक स्तर पर आज श्रीरामकथा का साहित्य लगभग सभी प्रमुख भाषाओं में उपलब्ध है। तुलसीदास जी की श्रीरामचरितमानस अपनी सरल भाषा एवं समर्पित भक्ति भावना के उत्प्रेरित है। तुलसी की विशेष मनोभाषिक भावाव्यक्ति के कारण ही आज श्रीरामचरितमानस विश्व में सर्वाधिक लोकप्रियता प्राप्त करने में सफल होने वाली रामकथा है। आज तुलसी की श्रीरामचरितमानस रचनाकारों के मनोभाषिक व बहुभाषिकता के कारणों के चलते सभी भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होने के साथ विदेश की भाषाओं में भी देखी जा सकती है, जो साहित्य जगत में शीर्ष स्थान प्राप्त कर चुकी है। वाल्मीकि रामायण की संस्कृत भाषा में लिखित रामकथा से ही श्रीरामचरितमानस का अवतरण अवधी हिंदी भाषा में हुआ है। बावजूद इसके तुलसी की श्रीरामचरितमानस न केवल वाल्मीकि रामायण से अपितु संसार में प्रचलित अन्य सभी रामकथाओं से सर्वाधिक लोकप्रिय व स्वीकार्य है। जिसके चलते रचनाकारों द्वारा श्रीरामचरितमानस को विभिन्न भाषाओं में अपने मानसिक दृष्टकोण व निजी विचारों को कथा में अभिव्यक्ति द्वारा प्रस्तुत कर समाज को समर्पित किया है। रचनाकारों की प्रलचित विभिन्न भाषाओं में व्याप्त रामकथाओं का प्रस्तुत आलेख में वर्णन प्रस्तुत किया गया है। भारतीय भाषाई की रचनाओं की बात की जाए तो श्रीरामचरितमानस विभिन्न भारतीय भाषाओं में एक ही भाषा के कई,कई संस्करणों में उपलब्ध है- जिनमें रचनाकारों के मनोभाषिक एवं बौद्धिक कौशल विकास का समग्र रूप प्रस्तुत हैं, वर्तमान समय में कवियों, लेखकों एवं रचनाकारों की विरक्त अभिव्यक्ति तथा लेखन कौशलता से उपलब्ध विभिन्न भारतीय भाषाई रामकथाएँ इस प्रकार हैं-

संस्कृत में,(वाल्मीकि) वाल्मीकि रामायण- योगवासिष्ठ या 'वशिष्ठ रामायण' ,(वाल्मीकि) अध्यात्म रामायण ,(वेद व्यास) आनन्द रामायण ,(वाल्मीकि) अगस्त्य रामायण ,(वाल्मीकि) अद्भुत रामायण ,(वाल्मीकि) रघुवंश । (कालिदास) ,(अवधी-हिन्दी) श्रीरामचरितमानस-हिन्दी में राधेश्याम रामायण ,(हिन्दी) पउमचरिउ या पद्मचरित 'जैनरामायण' ,अपभ्रंश) विमलसूरि कृत ।(

गुजराती में- (श्रीधर) रावण मंदोदरी संवाद , रामप्रबंध (मीठा) , रामायणपुराण (स्वयंभूदेव) , राम बालचरित (भालण) , रामविवाह (भालण) , रामायण (नाकर) , लवकुशाख्यान (भालण) , रामायण (कहान) , रामायण (उद्धव) , रामायण (विष्णुदास) अंगदविष्टि (विष्णुदास) , लवकुशाख्यान (विष्णुदास) , रामविवाह (वैकुंठ) , सीतानो सोहलो ,(तुलसी) परशुराम आख्यान (शिवदास) , महीरावण आख्यान (राणासुत) , सीतास्वयंवर (हरिराम) , सीतानां संदेशा (वजियो) , रणजंग (वजियो) , सीतावेल (वजियो) , सीतानो संदेशो ,(मंडण) रावण मंदोदरी संवाद (प्रभाशंकर) , रामचरित्र (देवविजयगणि) , रामरास ,(चन्द्रगणि) अंजनासुंदरीप्रबंध (गुणशील) , सीताराम रास (बालकवि) , अंगदविष्टि (कनकसुंदर) , रामसीताप्रबंध ,(समयसुंदर) रामयशोरसायन (केशराज) , सीताविरह (हरिदास) , सीताहरण (जयसागर) , सीताहरण (कर्मण) , रामायण (प्रेमानंद) , ऋषिश्रंग आख्यान प्रेमान)ंद,(रणयज्ञ (प्रेमानंद) , गुजराती योगवासिष्ठ (रामभक्त) , रावण मंदोदरी संवाद ,(शामलभट्ट) अंगदविष्टि (शामलभट्ट) , सीतास्वयंवर (कालीदास) , सीतामंगल (पुरीबाई) , सीतानी कांचली (कृष्णाबाई) , सीताविवाह (कृष्णाबाई) , रामकथा (राजाराम) , रामविवाह (वल्लभ) , रामचरित्र (रणछोड) , सीताना बारमास (रामैया) , रामायण ।(गिरधर)

ओड़िया में जगमोहन रामायण या दाण्डि रामायण या ओड़िआ रामायण- (बळराम दास) , बिशि रामायण ,(बिश्वनाथ खुण्टिआ) सुचित्र रामायण ,(हरिहर) कृष्ण रामायण (यककृष्ण चरण पट्टना) , केशब रामायण (केशब पट्टनायक) , रामचन्द्र बिहार (चिन्तामणी) , रघुनाथ बिळास (धनंजय भंज) , बैदेहीशबिळास (उपेन्द्र भंज) , नृसिंह पुराण (पीताम्बर दास) , रामरसामृत सिन्धु (काह्नु दास) , रामरसामृत (राम दास) , रामलीळा (पीताम्बर राजेन्द्र) , बाळ रामायण (दास बळराम) , बिलंका रामायण भक्त) (कवि शारलादास भास्कर-। तेलुगु मेंरामायण, रंगनाथ रामायण, रघुनाथ रामायणम्,

भास्कर रामायण, भोल्ल रामायण। कन्नड में- कुमुदेन्दु रामायण, तोरवे रामायण, रामचन्द्र चरित पुराण, बत्तलेश्वर रामायण।

अन्य भाषाओं में,(असमिया) कथा रामायण- कृत्तिवास रामायण ,(बांग्ला) सिलहटी रामायण ,(सिलहटी) भावार्थ रामायण ,(मराठी) राम बालकिया ,(गुजराती) रामावतार या गोबिन्द रामायण पंजाबी)'गुरु गोबिन्द सिंह द्वारा रचित',(रामावतार चरित ,(कश्मीरी) रामचरितम् ,(मलयालम) रामावतारम् या कंबरामायण ,(तमिल) मन्त्र रामायण, गिरिधर रामायण, चम्पू रामायण ,(राजा भोज) आर्ष रामायण या आर्प रामायण, अनामक जातक ,(बौद्ध परम्परा) दशरथ जातक दशरथ (बौद्ध परंपरा) ।(चन्दा झा) रामायण मैथिली (बौद्ध परंपरा) कथानक

महाकवि कालिदास, भास, भट्ट, प्रवरसेन, क्षेमेन्द्र, भवभूति, राजशेखर, कुमारदास, विश्वनाथ, सोमदेव, गुणादत्त, नारद,लोमेश , मैथिलीशरण गुप्त, केशवदास, समर्थ रामदास, संत तुकडोजी महाराज आदि चार सौ से अधिक कवियों तथा संतों ने अलगअलग भाषाओं में राम तथा रामायण के दूसरे पात्रों के बारे में काव्यों व - कविताओं की रचना की है। स्वामी करपात्री ने'रामायण मीमांसा' की रचना करके उसमें रामगाथा को एक वैज्ञानिक आयामाधारित विवेचन दिया। वर्तमान में प्रचलित बहुत से राम,कथानकों में आर्ष रामायण- अद्भुत रामायण, कृत्तिवास रामायण, बिलंका रामायण, मैथिल रामायण, सर्वार्थ रामायण, तत्वार्थ रामायण, प्रेम रामायण, संजीवनी रामायण, उत्तर रामचरितम्, रघुवंशम्, प्रतिमानाटकम्, कम्ब रामायण, भुशुण्डि रामायण, अध्यात्म रामायण, राधेश्याम रामायण, श्रीराघवेंद्रचरितम्, मन्त्र रामायण, योगवाशिष्ठ रामायण, हनुमन्नाटकम्, आनंद रामायण, अभिषेकनाटकम्, जानकीहरणम् आदि मुख्य हैं।

श्रीरामकथा साहित्य के विभिन्न भाषाई रचनाकारों के लेखन, बौद्धिक एवं वैचारिक कौशल से ही भक्ति साहित्य में श्रीरामकथा को आज शिखर पर आयाम स्थापित हुआ है। श्रीरामचरितमानस में तुलसी के अपने विरक्त भाषाई कौशल एवं

भक्ति भाव प्रधानता के कारण ही आज विश्व में उनका महाकाव्य श्रीरामचरितमानस अद्भुत पहचान प्राप्त करने में सफल रहा है। तुलसी के भक्ति साहित्य में युक्त भाषाई कौशल की इस अनुपम मनोभाषिक भावाव्यक्ति के रसानंद की अनुभूति ने ही वास्तव में श्रीरामचरितमानस को वैश्विक स्तर पर स्थापित किया है। आज विभिन्न भाषाओं में भारतवर्ष में लगभग तीन सौ से अधिक व संसारभर में लगभग तीन हजार से अधिक बहुभाषाई रामकथाएँ प्रचलित हैं। विशेष बात यह है कि जो तीन हजार से अधिक भारतीय व चर्चित रामकथाएँ है,उनमें मुख्य रुप से श्रीवाल्मीकि रामायण . महर्षि कंबन रामायण, श्रीरामचरितमानस, अद्भुत रामायण, अध्यात्म रामायण और आनंद रामायण आदि की लोकप्रियता की चर्चा अधिक होती है। जिनके रचनाकारों ने अपने विविध भाषाई कौशलों की विलक्षणता से उसे विविध भाषाओं में अपने समाज को उपलब्ध कराकर धरातल पर बिखरने का काम किया है।

भक्ति साहित्य के साहित्यकारों, विद्वानों, रचनाकारों, कवियों एवं अनुवादकों के भाषाई, बौद्धिक एवं वैचारिक कौशल से ही देशभर की प्रचलित विभिन्न भाषाओं में आज बहुभाषी रामकथाओं का अध्ययन करने को मिल जाता हैं। रामकथाओं के रचनाकारों के लेखन कौशल, बौद्धिक, वैचारिक कौशलों एवं भाषाई कौशलों के मिश्रण से इन रामकथाओं में नए,नए तथ्यों की जानकारी- विभिन्नताएँ व असमानताएँ मिलती है। भारत से बाहर दुनियाभर में भी जो बहुभाषी रामकथाएँ प्राप्त होती हैं, उनके समस्त भक्ति साहित्य की कथाओं, रामकथा साहित्यों की भाषा शैली, पात्रों संबंधी विषमताएँ, उनके परिधानों, परिवेशों आदि की भिन्नता स्पष्ट दिखाई देना रचनाकारों के कौशलों की ही देन है।

विश्वभर में रामकथाओं के लिखित एवं रचित भक्ति साहित्य के अतिरिक्त भी कई अन्य प्रकार की रामकथाएँ भी प्राप्त होती हैं, जिनमें कुछ लोककथाओं के रूप में प्रचलित हैं, तो कुछ शिलालेख, नृत्य,संगीत- लोककथाओं आदि के द्वारा साहित्य में समाहित हैं। रामायणों की इन प्रचलित रामकथाओं के विभिन्न पहलुओं को उजागर

किया जाता है, प्रचलित भारतीय रामकथाओं से सर्वाधिक अलग हैं। कुछ रामायणों में श्रीराम के चरित्रों को अपने अधिक मानवीय रूप में प्रस्तुत किया है, जबकि अन्य में उन्हें देवता के रूप में दिखाया गया है। भक्ति साहित्य में श्रीरामकथा की वैश्विकता में स्थापित रामकाव्य के यह सभी सभी पक्ष कवियों, लेखकों, रचनाकारों, साहित्यकारों अथवा विद्वानों के विविध भाषाई लेखन, वाचन तथा श्रवण आदि के बौद्धिक एवं वैचारिक कौशलों की ही देन है।

निष्कर्ष- श्रीरामकाव्य की आधारित श्रीरामकथा एक ही है किंतु विश्वभर के रचनाकारों एवं विद्वानों के भाषाईचिंतन एवं बौद्धिक कौशलों के परिलक्षित होते हुए , आज यह श्रीरामकथा विश्वभर में अपने विविध रूपों, नामों एवं भाषाओं से नवीन आयाम में स्थापित किए हुए है। नित्य रामकथा के पढ़नेलिखने एवं वाचन में जातक , को अपनी भावाव्यक्ति से हृदय में समाहित होने वाले नये रसानंद एवं श्रवण करने वालों के लिए अर्थों की प्रस्तुति से नवीन एवं सुखद मर्म का प्रायः हृदय स्पर्श होना आम है।

संदर्भ-

- पोद्दार हनुमान प्रसाद, श्रमद्गोस्वामी तुलसीदासजीतिरचित 'श्रीरामचरितमानस' ,सचित्र) सटीक, मोटा टाइप,(बालकाण्ड, प्रकाशक एवं मुद्रक गीताप्रेस, गोरखपुर,273005- सं 2071 .दो सौ पचहत्तरवाँ, पृष्ठ संख्या 186
- वही, पृष्ठ संख्या 193
- 'वाल्मीकीय रामायण', प्रकाशक, देहाती पुस्तक भंडार, दिल्ली250 .पृ ,
- वही, पृ255 .
- गोस्वामी तुलसीदास, रामजी तिवारी, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, पृ15 .
- तुलसीकाव्य मीमांसा, उदयभानु सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ . 105

- हिन्दी साहित्य कोश भाग,1- धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल, वाराणसी, पृ72 .
- हिन्दी साहित्य कोश भाग,2- धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमण्डल,वाराणसी , पृ40 .
- राजगोपालन, न,.वी. प्रथम (कंबन-लेखक)संस्करण,2000- कंब रामायण, महाकवि कंबनरचित-
  मूल तमिल से अनूदित, भाग,2- प्रकाशक बिहार,राष्ट्र भाषा परिषद- पटना-(4) पृ211 .
- वही, पृ215 .
- गोस्वामी तुलसीदास, रामचन्द्र शुक्ल, नागरीप्रचारणी सभा, वाराणसी, पृ . 110
- हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्लनागरीप् ,रचारणी सभा, वाराणसी, पृ52.
- मध्यकालीन कविता के सामाजिक सरोकार, डॉ,सत्यदेव त्रिपाठी. शिल्पायन, दिल्ली, पृ83 .
- हजारीप्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली,मुकुन्द द्विवेदी , राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ211 .
- लोकवादी तुलसी, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन,नई दिल्ली , पृ95 .
- इंटरनेट साभार

दीपेन्द्र कुमार,
शोधार्थी, हिंदी विभाग,
मणिपुर अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय, मणिपुर (इंफाल)
मो9456010031 .
ईमेल- up80dk@gmail.com

काव्य खंड

जंगलों में आदमखोर

शहर की ओर कुच कर रहे हैं बंदर
छत के बारजे पर बैठे एक से मैंने पूछा
जंगलों में आदमखोरों की संख्या बढ़ गई है क्या?
सर को ऊपर नीचे करते हुए मेरी ओर देखकर
हूक भरने लगे, झिलमिलाती आंखों से
डर झलक रहा है, पर उनके हाव-भाव
कुछ और बताते हैं, मानो मैंने
उनसे कुछ अपना छीन लिया है,
पिता अखबार की मुख्य लाइन पढ़ते हुए
खुश हुए और उछल पड़े, पिता कहते हैं कि
शहर के बाहर जंगलों की ओर एक विश्वविद्यालय खुलेगा सरकार ने दी मंजूरी.

नयी डालियां

डालियां छांट दो
सृजित को अवकाश दो
जड़ें नई परंपराओं की मांग करती हैं
संस्कृतियां उजाड़ दो

मोह को स्मृतियों में संजो लो
गाथाएं बनाओ, कहानियां बनाओ
जो हो चुका है, बस, उसे अब न चलाओ
इतिहास पर गौरव किस काम का?
वर्तमान जब इतिहास में निराशा के साथ
जाना जाएगा, नई डालियां फुटुकने दो

नए पल्लवों की छांव लो, छटे हुए को और छांटो
बाड़े बना दो सुरक्षा में सभ्यता की

बदलाव हर समय बदलाव चाहेगा
वर्तमान को अवकाश तो दो
कल के लिए स्थान तो दो
छींटे पड़ेंगे वर्तमान के कल पर
पर वे अपना रंग न अलगाएं, तो शामिल कर लेंगे
उसे भी कल के चित्र में, बस वह अपना रंग न अलगाएं

सच्चा कवित्व

मैं गरीब कभी ही सही
भूख देखी है मैंने, भूखों को देखकर
कविताएं नहीं लिखी

कवियों को अभावों में रहना चाहिए
कवि का अभाव ही सच्चा कवित्व है
मखमली सोफे पर बैठकर गुदगुदी घास का
चित्रण करने वाले न तो सोफे के साथ
इंसाफ कर पाते हैं,बल्कि घास के साथ भी

सुकवियों को चाहिए सोते वक्त
फटे कंबल को ओढ़े, किसी कोने में
उनरे सलवटो से घुसती शीत की सिरहने
अक्सर कविताओं का शिखर बनती है

विनोद कुमार 'हंस'
महावीर नगर मानिकपुर चित्रकूट २१०२०८
vk6307260@gmail.com/8090601872

चुप्पी की संस्कृति

कोई पूछता नहीं इस डर से
कि कहीं पूछने का रिवाज न बन जाए,
सब मौन हैं इस डर से
कि कहीं जीवन और खुशहाली ही खतरे मे ना पड़ जाए,
शासन व्यवस्था को मौन ही शांति लगती है
लोग शांति, मौन और सन्नाटे में अंतर को जानने की कोशिश भी नहीं करते
क्योंकि वे जानते हैं मौन को तोड़ने का अर्थ!
मौन तोड़ने का अर्थ विद्रोह होगा
एक ऐसी संस्कृति से जिसका नाम है
चुप्पी की संस्कृति !
चुप्पी की संस्कृति जहां हर किसी को सिर्फ चुप कराया जाता है
चुप कराने के भी कई उपाय अपनाए जाते हैं
कभी रीति-रिवाज और संस्कारों की दुहाई देकर
तो कभी शर्मो-हया की तालिम देकर कर दिया जाता है चुप
कभी पुरुष प्रधान और पित्रसत्ता की जंजीरों में
जकड़ कर परम्पराओं के नाम पर करा दिया जाता है चुप
कभी चुप कर दिया जाता है सत्ता की अधिनायकटवादिता से
कभी डर का माहौल बना कर तो कभी राष्ट्र विरोधी करार दिया जाता है
उन्हें जो तोड़ते हैं
चुप्पी की संस्कृति !
मौन हैं वे भी जिनका काम ही बोलना था
जिनको पहचान ही बोलने के कारण मिलती थी
मौन वे कलम भी हैं
जिनका काम शब्दों के दम पर
सत्य, निष्ठा , धर्म, मूल्य और स्वतंत्रता की रक्षा करना था
मौन वे बुद्धिजीवी भी हैं जिनके विचारों को
गति मिली थी गरीबों, शोषितों और वंचित वर्गों पर लिखने पर

मौन वे शासक भी हैं
जो सत्ता में गरीबों और पिछड़ो के
विकास के दम पर दावेदार बन कर आए थे
मौन रह कर उन्होंने अपने निजी स्वार्थ को
बचाए रखा है
किन्तु मैं पूछता हूँ
कब तक के लिए बचा रहेगा ये स्वार्थ
जंगल में आग लगने पर न तो झाड़ियाँ बचती हैं
न ही वे लंबे पेड़ बचते हैं जो आपस में
रगड़ने भर से चिंगारी पैदा कर बैठते हैं
आखिर क्यों है ये चुप्पी की संस्कृति ?
क्या शिक्षा सवालों के बदले चुप्पी साधने की कला सीखा रही है ?
क्या समाज में सवाल पूछने का रिवाज धीरे-धीरे समाप्त हो जाएगा ?
क्या कोई राष्ट्र इस प्रकार चुप्पी की संस्कृति के साथ
विश्व गुरु बन सकता है ?

धर्मेन्द्र कुमार
शोधार्थी
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

बहू रानी

डॉ. सतीश "बब्बा"

कुछ कहावतें गांव में कही जाती हैं, वह अनुभवी बुजुर्गों के शोध से बनाई गई लगती हैं, लगती हैं नहीं, वह तो हैं ही! एक कहावत कही जाती है, 'घर की मुर्गी दाल बराबर!' 'दूसरे की पतरी का बरा ज्यादा अच्छा होता है!'

लखन की बहू जतरी साधारण सी दिखने वाली लड़की थी। हां साज-श्रृंगार में वह किसी से भी कम नहीं लगती थी। यद्यपि जतरी लखन की सबसे छोटी बहू थी। उससे तीन बड़ी बहुएं थीं। बीच की दो बहुएं सगी बहनें थीं। लखन के लिए सभी बराबर थीं।

लखन की पत्नी सुनंदा के मरते ही लखन का सिंकंजा घर से छूट गया था। कहते हैं पति कितना भी कमाऊ हो, पत्नी गृहस्थी में नहीं है तो वह घर-गृहस्थी नहीं के बराबर होती है।

सुनंदा की असमय मृत्यु से लखन टूटकर बिखर गया था। लखन की कम आमदनी में सुनंदा ने ऐसी गृहस्थी सजाई थी; जिसकी प्रशंसा नाते-रिश्तेदार करते थे, पूरा गांव करता था। सुनंदा की गृहस्थी में सभी वह चीज थी जो गृहस्थी में होनी चाहिए थी।

सुनंदा की मृत्यु के बाद लखन ने यह संकल्प लिया था कि, वह न तो किसी से कुछ मांगेगा, न ही किसी को कुछ देगा।

लखन की छोटी बहू जतरी देख रही थी कि, उसकी जेठानियों का डेरा उनके अपने मायके में ही रहता है। ससुर लखन से कोई मतलब नहीं है कि, सुनंदा की बनाई गृहस्थी का सामान कैसे, कहां जा रहा है।

जतरी आती-जाती रही थी। रवन-थवन की रस्में पूरी हो गईं थीं। जतरी ने देखा उसकी जेठानियां मेहमान की तरह अपने घर ससुराल आती हैं; बांकी अपने-अपने मायके में ही रहती हैं।

जतरी की मम्मी भी जतरी को बार-बार बुला रही थी; उसकी जेठानियों की तरह!

जतरी ने देखा, सास की बनाई गृहस्थी अब बिखरने लगी है। ससुर को क्या दोष, वह तो असमय विधुर होकर पागल नहीं हुआ है, यह क्या कम है?

लखन पूरी तरह से साधु-संत सा जीवन जी रहा है। सबकुछ अभी उसी की कमाई का है; सुनंदा का बनाया हुआ स्वर्ग से सुन्दर घर! सबको ठोकर मारकर जो खाने को मिल गया खा लिया, भूखा-प्यासा रहा आएगा; किसी से कुछ मांग नहीं सकता है। नुकसान-फायदा से भी कोई लेना - देना नहीं है।

जतरी ने देखा, जेठानियां बड़ी सुंदर हैं। उनके पति परदेश चले जाते हैं, वह मायके में रही आती हैं।

लखन ज्यादातर बाहर निकल जाता है। घर भी आता है तो एक अलग कमरे में रहता है, वहीं खाना जो मिल जाता है, खा लेता है, बिना शिकवा - शिकायत के!

जतरी को मात्र दस दिन हुए थे ससुराल से मायके आए हुए! जतरी ने अपने पति को फोन लगाकर कहा, "आप चाहे जहां रहें, मैं अपने घर में रहूंगी, पापा को खाना दूंगी, अपनी गृहस्थी देखूंगी। आप तुरंत आइए मुझे लेने; वरना मैं खुद चली आऊंगी!"

उसके आदमी ने देरी नहीं की, तुरंत जतरी के मायके पहुंच गया। दामाद को अचानक आया देखकर जतरी की मम्मी ने पूछा, "अचानक कैसे भुला गए आप, दामाद जी; सब ठीक तो है न!"

जतरी के पति ने कहा, "मैं जतरी को लेने आया हूं। कल सुबह ही बिदा कर दीजियेगा!"

जतरी की मम्मी ने कहा, "दामाद जी, ऐसी क्या जल्दी है, आपकी भाभियां तो साल में कभी एकाध बार, दस दिन के लिए जाती हैं। मेरी जतरी तो अभी आई है, कुछ दिन रह लेने दीजिए!"

इसके पहले कि, जतरी का पति कुछ कहता, जतरी ने झट कहा, "मम्मी, इन्हें मैंने बुलाया है। कल हमारे लरिका-बच्चा होइ हैं, हमें घर-गृहस्थी बनाना चाहिए कि नहीं? आपका जो काम था, आपने कर दिया। मेरा अपना घर है, मैं अपने घर में ठीक रहूंगी!"

जतरी की मम्मी ने समझाते हुए कहा, "जतरी, वहां जाकर क्या करोगी? सबकुछ साझे में है, अकेले तुम क्यों परेशान हो रही हो, हिस्सा समधी साहब अपने जियत नहीं बांटेंगे!"

जतरी तमतमा गई! उसने अपनी मम्मी से दो टूक शब्दों में कहा, "मम्मी ध्यान से सुन लीजिए, मैं बांट कराना नहीं चाहती, अपने दम तक मैं हिस्सा बांट नहीं होने दूंगी, बाबू जी सौ साल जिंदा रहें मैं चाहती हूं, वह तो हमारे देवता हैं न! अगर मम्मी के सोच में उन्हें कुछ हो भी गया, तो भी मैं हिस्सा नहीं बंटने दूंगी!"

जतरी की मम्मी ने समझाते हुए कहा, "मैं कौन होती हूं तुम्हारे घर के बारे में कुछ कहने वाली; वो तुम्हारी जेठानियों में ऐसी सोच तो नहीं है, वह तो दो-दो बच्चों की महतारी भी हैं!"

जतरी ने कहा, "सभी के कमरे अलग - अलग हैं, ताले लगाकर मायके में रहती हैं। अपने - अपने मायके से लाए सामान को सुरक्षित रखे भी हैं। मेरा भी कमरा है मेरी सास सबको अलग - अलग कमरे दिए थे। मैं भी अपने कमरे में अपने सामान के साथ रहूंगी, मैं इनकी कमाई से अपनी सास की तरह गृहस्थी बनाऊंगी। अपनी

सास का जो सामान है सब एक कमरे में रख दूंगी, जब सब कोई आएंगे सास की रसोई में, सास के बर्तनों में खाना बनाएंगे, एकसाथ सब लोग खाना खाया करेंगे!"

जतरी का पति रो पड़ा था। उसने अपने आंसू पोंछते हुए कहा, "यही तो मेरी मां चाहती थी। मैं धन्य हो गया जतरी तुझे पाकर! खेत में जो होगा उसे खाएंगे, अपनी-अपनी कमाई रखेंगे; काम पड़ने पर एक दूसरे की मदद करेंगे!"

जतरी की मम्मी ने कहा, "वह लोग क्या ऐसा करेंगे?"

अब जतरी ने कहा, "उनकी सोच वो जानें! हम अपनी कमाई की बात करते हैं। ए कमाकर लाएंगे मैं अपनी सास सुनंदा की तरह गृहस्थी बनाऊंगी, सजाऊंगी। हालांकि मेरे ससुर लखन, लखन ही हैं, वह नहीं भी लेंगे तो मैं उनको खर्च दिया करूंगी; मेरी बात वह नहीं टाल सकते हैं, मुझे विश्वास है!"

जतरी अपने ससुराल आ गई थी। लखन को समय-समय पर खाना - पानी मिलने लगा था। लखन जतरी को मन ही मन आशीष देता था। कुछ दिन बाद जतरी भी मां बन गई थी। जतरी का बेटा लखन के पास अच्छी बातें सीखने लगा था।

समय गतिमान होता है। बहुत दिन बीत गए थे! लखन बूढ़ा हो गया था। अब जतरी की जेठानियों का मायके से पत्ता कट गया था। उनके मायके में भाभियां आ गईं थीं। यहां ससुराल में सबकुछ से संपन्न जतरी बहुत खुश थी।

ससुराल में जतरी के जेठ जो पैसे देते थे, उन पैसों में गृहस्थी तो बनी नहीं। जतरी के जेठानियों को वाह - वाह मिला था बस!

घर में जतरी ने खाना एक में बनाने का ऐलान किया था। जिससे जेठ-जेठानी को राहत मिली थी। खर्च अपना-अपना होगा यह भी ठीक था। नई गृहस्थी बनाना कठिन था।

एक दिन जतरी ने देखा कि, जेठानियों के बच्चे सरकारी स्कूल में पढ़ने जाते हैं, उनको आ कुछ नहीं रहा है। जतरी ने उन्हें देखकर एक बड़ा फैसला लिया था।

जतरी ने रात में अपने पति से कहा, "सुबह उठकर मेरी जेठानियों के बच्चों को जहां अपना बेटा पढ़ता है वहां नाम लिखाना है। उनके पढ़ाई का खर्च हम उठाएंगे, मेरे बचत खाते से पैसे निकाल कर उनको ड्रेस भी बनवाना है!"

जतरी के पति ने कहा, "अरे महारानी, मेरा भी सुनोगी या अपनी ही सुनाती रहोगी! तुम्हारे पैसे नहीं निकालेंगे, मेरे काम में मेरे लिए सेठ ने पैसे बढ़ा दिए हैं। वही पैसे जो कल दिया हूं, उनको देना मैं सब कर लूंगा, मेरे भुलक्कड़ आका!"

उसने जतरी को अपने अंक में भरकर चूम लिया था। फिर कहा, "बस तुम्हारे इशारे की, तुम्हारे साथ की, तुम्हारे आदेश की जरूरत है, बाकी सब मुझपर छोड़ दिया करो!"

दोनों एक-दूसरे को छुपाकर खुशी के आंसू बहा रहे थे। दोनों प्रेम के झूले में झूलते हुए सो गए थे।

सुबह चाची जतरी ने सभी बच्चों को नहलाकर तेल काजल लगा रही है, यह देखकर सभी जेठानियां बहुत शर्मिन्दा हो गईं थीं।

वह जेठ - जेठानियां जो इतनी देर से जागी थीं, कुछ समझ पातीं कि, जतरी का पति उनको लेकर बाहर निकल गया था। वह भाई-भौजाई पूछ तक नहीं सके थे कि, कहां लिए जा रहे हो! एक ने इशारा किया, "क्या हुआ?"

सभी ने कहा, "चुप रहना, लड़कों को जतरी अपने लड़के की तरह मानती है, बुरा मान जाएगी!"

जतरी समझ रही थी उस खुसर-पुसर को! जतरी अपने काम में लग गई थी।

शाम को सभी बच्चों को जतरी लेकर आ गई थी। क्योंकि जतरी के पति को काम से आने पर देर हो जाती थी।

बच्चों को चाची खिला - पिलाकर सुता दिया था। बच्चों के चाचा, जतरी के पति ने थोड़ी देर पढ़ने भी बैठाया था। जतरी का बेटा भी अपने बाप को चाचा ही कहता था।

दूसरे दिन खटर - खुटुर सुनकर जतरी जल्दी-जल्दी उठकर देखा तो जेठानियों ने सारे काम संभाल लिए थे; चूल्हा-चौका, बर्तन, झाड़ू-पोंछा आदि! जतरी ने कहा, "दीदी!"

वह कुछ आगे कहती, सभी जेठानियों ने कहा, "जाओ अपने बच्चों को तैयार करो, तुम भी नहा लो! सभी जन साथ-साथ कुछ अच्छी सी चीज बनाते हैं, सासू मां की तरह!"

जतरी जब लखन को खाना लेकर गई थी, लखन बहुत खुश था। लखन को सब पता चल जाता था कि, घर में क्या चल रहा है! लखन के जासूस उसके पोते सबकुछ बता दिया करते थे।

लखन ने जतरी को ढेर सारा आशीर्वाद दिया। सुनंदा की तस्वीर की ओर देखकर लखन ने कहा, "सुनंदा, तेरी असली बहू रानी है जतरी; इसने तुम्हारे कदमों पर चलना सीख लिया है। तुम्हारे परिवार को एक माला में पिरो दिया है; अब मैं शुकून से तुम्हारे पास आ सकता हूं!"

सभी जेठानियां, जेठ जतरी को बहुत आशीषों से नवाजते रहते हैं। पूरा गांव कहता है, 'लखन, सुनंदा की बहू रानी जतरी गांव भर में नंबर एक है!'

डॉ. सतीश "बब्बा"

हस्ताक्षर

पता - डॉ. सतीश चन्द्र मिश्र, ग्राम + पोस्ट कोबरा,
जिला - चित्रकूट, उत्तर - प्रदेश, पिनकोड - 210208.
मोबाइल - 9451048508, 9369255051
ई मेल - babbasateesh@gmail.com